समुदाय व संरक्षण

समुदाय आधारित जैवविविधता संरक्षण तथा आजीविका सुरक्षा

अंक ९, नं. २-३ जून २०१८ - मई २०१९

विषय सूंची

प्रस्तावना

१. कहानियां
- पर्यावरण की राजनीति और आजीविका की लड़ाई आज लोकतांत्रिक संघर्ष के लिए एक सूक्ष्म जगत बन गई है
- पारंपरिक खुदाई करने वाले भोवी समुदाय
- आई.आई.टी. के भूतपूर्व छात्र ने बनाई बांस की बोतलें
- मानव हाथी मुठभेड़ को कम करने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग

२. दूरदर्शी लोग
- गांधीजी और स्वराज

३. तर्क – वितर्क
- महात्मा और पंडित

४. दृष्टिकोण
- बहुसंख्यकों का अत्याचार

५. बातचीत
- ईकोनारीवाद और क्रांतिकारी पारिस्थितिक लोकतंत्र

६. उम्मीद के निशां
- पवलगढ़ में समुदाय–आधारित पर्यटन

मुलगामि प्राक्रितिक स्वराज पर विशेष अंक

प्रस्तावना

वर्ष २०१८ में २०वीं शताब्दी के दो विशाल दूरदर्शियों की जयंती मनाई गई कार्ल मार्क्स की २००वीं और मोहनदास कर्मचंद गांधी यानि महात्मा गांधी की १५०वीं। एक यूरोपीय और दूसरा एशियाई। एक का जन्म प्रशिया में जातीय रूप से यहूदी परिवार में हुआ जो बाद में इंजील चर्च से जुड़ गए, और दूसरे का जन्म गुजरात में एक हिंदु बनिया परिवार में हुआ। दोनों की पढ़ाई वक़ालत में हुई। एक ने कई प्रकार के रूप लिए, एक दार्शनिक, अर्थशास्त्री, इतिहासकार, समाजशास्त्री, राजनीतिक सिद्धांतकार, पत्रकार, और समाजवादी क्रांतिकारी। दूसरे ने एक देश को एक औपनिवेशिक जामे से स्वतंत्रता दिलाने का नेतृत्व किया। दोनों ही सफल लेखक थे, लेकिन एक को ज़्यादातर उनके राजनीतिक पर्चे कम्यूनिस्ट मेनिफेस्टो के कारण जाना जाता है और उनके द्वारा पूंजिवाद की आलोचना कैपिटल जिसमें एक नैतिक रूप से अनिवर्चनीय प्रणाली के शोषक और निष्कर्षक तरीकों को उजागर किया गया है; दूसरे को उनकी आत्मकथा सत्य के साथ मेरे प्रयोग और हिंद स्वराज नाम के उनके दार्शनिक पंथ।

अपने कामरेड फ्रेडरिक एन्गेल्स के साथ मिलकर, कार्ल मार्क्स ने अपने राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक लेखों के माध्यम से हमें, विशेष रूप से पूंजिवाद में, वर्ग आधारित समाज की विचारधारा का गहरा विश्लेषण दिया। उन्होंने ज़्यादातर लोगों पर होने वाले इसके अमानवीय प्रभावों के बारे में गुस्से के साथ लिखा। उन्होंने इसके परभक्षी तर्क को पर्दाफ़ाश किया जो कुछ गिनेचुने लोगों की समृद्धि के लिए अनगिनत लोगों को स्थाई नुक्सान पहुचाता है, जिसमें अन्य संवेदनशील जीवन सहित प्रकृति का नाश शामिल है। चयापचय की दरार की अपनी धारणा के माध्यम से, उन्होंने उस अलगाव के बारे में बात की जो मानव जाति स्वयं के साथ–साथ प्रकृति के साथ बनाता जा रहा है और जिसे पूंजिवाद बढ़ावा देता है। उनके द्वंद्वात्मक विश्लेषण के माध्यम से, हमे समाज के काम करने के तरीकों को समझने का तरीका मिलता है। उनके आर्थिक अध्ययनों से हमें पता चलता है कि किस प्रकार पूंजिवादी व्यवस्था मज़दूरों का शोषण करके अधिशेष लाभ कमाती है। वे दर्शाते हैं कि जीवित श्रम पर मृत पूंजी कैसे शासन करती है। वे अपने पीछे सैद्धांतिक अवधारणाओं की एक समृद्ध शब्दावली छोड़कर गए हैं, जो आज भी दुनिया के काम करने के तरीकों को समझने के लिए उपयोगी है। उन्होंने हमें इतिहास की एक सैद्धांतिक समझ दी, जिसमें बताया गया कि किस प्रकार समाज वर्ग के संघर्ष से विकसित होता है। इस सबके ऊपर, वे एक क्रांतिकारी राजनीतिक कार्यकर्ता थे, जिन्होंने ज़रूरत पड़े तो हिंसात्मक तरीके से, पूंजिवाद को क्रांतिकारी रूप से उखाड़ फेंकने का आह्वान किया। पिछली शताब्दी के दौरान उनकी शिक्षा ने दुनिया भर के आदर्शवादियों को समाजवाद की स्थापना करके सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक न्याय के लिए क्रांतिकारी मार्ग अपनाने के लिए प्रेरित किया। पिछली शताब्दी के मध्य तक दुनिया के आधे देशों ने खुद को समाजवादी शासन घोषित कर दिया था, हांलाकि उनमें से अधिकांश वादों को पूरा करने में विफल रहे। वास्तव में ज़्यादातर देश विकृतियों के आगे झुक गए, और वे विशेषाधिकार प्राप्त नौकरशाही के साथ क्रूर अधिनायकवादी शासन बन गए, और अंततः बिखर गए। लेकिन, कुछ समय के लिए उन्होंने पीड़ित दुनिया को उम्मीद ज़रूर दी। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि मार्क्स ने राजनीति, समाजशास्त्र, नृविज्ञान, इतिहास, अर्थशास्त्र, साहित्य और साहित्यिक सिद्धांत, कला और सिनेमा, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, मनोविश्लेषण आदि के क्षेत्र में एक समृद्ध साहित्य और समाज के बारे में कैसे सोचा जाता है, इस क्षेत्र में अपनी अमिट छाप छोड़ दी।

महात्मा गांधी, जिन्होंने भारत की स्वतंत्रता के लिए नेतृत्व किया, उनकी उपलब्धियां भी कोई छोटी नहीं थीं। दक्षिण अफ्रीका में उनके कार्यकाल के बाद जहां उन्होंने अपने प्रतिरोध के तरीकों को तराशा, जिसे उन्होंने सत्याग्रह का नाम दिया, वे वापस भारत पहुंचे। उस समय लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की मृत्यु हुई थी, और उन्होंने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की कमान संभाली और उसके बाद अंग्रेज़ी औपनिवेशिक शासन के खिलाफ़ भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का नेतृत्व किया। वे एक असमान लड़ाई में एक सक्षम सिपाही साबित हुए, भले ही उनका हथियार सत्य और अहिंसा थे। इसी में उनकी प्रतिभा निहित थी। यकीनन उन्होंने भारत की आत्मा को ऐसे अपनाया जैसे पहले कोई न कर सका था, और उनके चुने गए प्रतिरोध के हथियार भारतीय सभ्यता के सत्य और अहिंसा के मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता से प्रेरित थे। कई लोगों के अनुसार, वे गौतम बुद्ध और महावीर जैसे लोगों के योग्य उत्तराधिकारी थे। दिल से वे गहरे रूप से आध्यात्मिक और हिंदु धर्म के लिए प्रतिबद्ध थे, लेकिन फिर भी उन्होंने इसकी कमियों और विकृतियों को सुधारने की कोशिश की। राजनीति को आध्यात्मिक बनाने की कोशिश करते हुए, वे स्पष्ट थे कि स्वतंत्र भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश होगा जो किसी भी भेदभाव के बिना सभी धर्मो को समान आधार पर सम्मान और सहिष्णुता देगा। बहुसंख्यक विचारधारा पर आधारित भारत देश का विचार उनकी आध्यात्मिक आत्मा के लिए घृणास्पद होता और उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान और विभाजन के बाद हुए भयावह हत्याकांड के दौरान सांप्रदायिक सद्भाव के लिए अथक प्रयास किया। उनके नेतृत्व की महानता यह थी कि उन्होंने दर्शाया कि घृणा किए बिना भी प्रतिरोध करना संभव है और यह भी कि राजनीतिक विरोधी दुश्मन नहीं होते। उनका तरीका टकराव नहीं, बल्कि अनुनय का था – क्योंकि वे वास्तव में यह मानते थे कि एक विरोधी को उसके गलत तरीकों का अहसास कराके, उसे सुधारना संभव है और उसके दमनकारी तरीकों को बदलना भी। यकीनन, भारतीय संघर्ष के लिए उनका सबसे बड़ा योगदान, जो

हमारे समय के लिए आज भी प्रासंगिक है, वह है स्वराज का विचार। दिल से वे अराजकतावादी थे जो खड़ी सेनाओं को खत्म करना चाहते थे और राष्ट्रवादी राज्य की प्रासंगिकता पर सवाल उठाते थे। उनका आदर्श था आत्मनिर्भर गांव गणराज्यों का एक समाज। उनके तरीकों को प्रासंगिक माना जाता रहा है और उन्होंने मार्टिन लूथर किंग जूनियर और नेल्सन मंडेला जैसे महान नेताओं को प्रेरित किया।

एक तरीके से कहा जाए तो, दोनों लोग एक दूसरे से उतने ही अलग थे जैसे कि पनीर से चाक। दोनों के अंधे अनुयायी होने के साथ–साथ पूर्वाग्रह से ग्रस्त आलोचक भी हैं। दोनों की ही शिक्षाओं को काफ़ी हद तक ग़लत समझा गया है या फिर उनके प्रभाव को अत्यधिक सरलता से दर्शाने की कोशिशें की गई हैं। जहां एक ओर एक की साधारण रूप से हिंसक सामाजिक क्रांतियों के प्रस्तावक होने की निंदा की जाती है, वहीं दूसरे को हिंदु वर्णाश्रम की हिंसा की तरफ़ से आंखें मूंदने के लिए दोषी ठहराया जाता है। जबकि एक को एक नर्मदिल आधुनिकतावादी कहा जाता है, वहीं दूसरे को एक आधुनिक–विरोधी कहा जाता है, और ऐसे ही कई अन्य नाम दिए जाते हैं। और फिर आपको एक महात्मा और एक साम्यवादी क्रांतिकारी के बीच चुनने को कहा जाता है। यदि आप एक के लिए हैं, तो आप ज़रूरी रूप से दूसरे के खिलाफ हैं। दूसरी ओर, ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो सरलता से इन महान हस्तियों को एक ही यिन–यांग इकाई के रूप में चित्रित करने का प्रयास करते हैं। चाहें जो भी हो, अक्सर यह भुला दिया जाता है कि दोनों ही जटिल मनुष्य थे, जो कठिन समय में काम कर रहे थे, और वह भी इतिहास के अलग–अलग मोड़ों पर।

चाहें आप उनसे प्यार करते हों या नफ़रत, आप उन्हें अनदेखा करके खुद को क्रांतिकारी नहीं कह सकते। पीपल इन कन्ज़र्वेशन के इस विशेष संस्करण को हम हाल के इतिहास के इन दो स्तंभों के लिए समर्पित करते हैं।

मिलिंद

१. कहानियां

पर्यावरण की राजनीति और आजीविका की लड़ाई आज लोकतांत्रिक संघर्ष के लिए एक सूक्ष्म जगत बन गई है

भारत की राजनीति लोकतंत्र का जश्न मनाती है लेकिन शायद ही कभी इसे गंभीरता से देखती है। लोकतंत्र की अवधारणा समय के साथ सिकुड़ती चली जा रही है और केवल उसके चुनावी पहलू तक ही सीमित होती जा रही है। बहुसंख्यक राजनीति की छाया लोकतांत्रिक सिद्धांत पर टिकी हुई है जिसमें असंतोष, विकल्प या अल्पसंख्यकों और हाशिए पर रहने वालों के भाग्य की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाता।

जैसे ही हमें लगने लगा कि शायद इसके आगे अब कोई रास्ता नहीं बचा है, वहीं तमिल नाडू में पर्यावरणीय राजनीति की एक नई लहर पनपती दिखाई देने लगी। थूतूकुड़ी इस आंदोलन के एक प्रमुख सूचक के रूप में खड़ा है। यह कई परतों में छिपी कहानी है जिसमें शामिल है राज्य, उसकी प्रशासन एजेंसियों और एक लालची कंपनी के बीच किया गया सहापराध, जिससे पूरे क्षेत्र को झूठ और चापलूसी से भरा एक कंपनी का शहर बनाने का प्रयास किया गया। जो इसे रोक पाया वह था, समुदाय का खुद उठ खड़ा होना और उनका अहसास करना कि भारत में कई राजनैतिक संघर्षो के लिए पर्यावरण या बल्कि प्रकृति एक साझी भाषा और पारिस्थितिकी है। पर्यावरण की राजनीति और आजीविका की लड़ाई आज लोकतांत्रिक संघर्षो के लिए एक सूक्ष्म जगत बन गई है।

स्रोत : http://vikalpsangam.org/article/an-emerging-wave-of-environmental-politics/#.XIddhSIzaM8

पारंपरिक खुदाई करने वाले भोवी समुदाय

आज, ४० प्रतिशत बंगलूरु शहर ज़मीनी पानी पर निर्भर है। बृहत बंगलूरु महानगर पालिके और पानी आपूर्ति तथा मल–व्यवस्था बोर्ड के नियमों के अनुसार, एक निर्धारित आकार की सभी नई व पुरानी इमारतों द्वारा बारिश के पानी को संजोना अनिवार्य है या फिर उन्हें इसका दंड भुगतना होगा। अत:, बारिश का पानी इकट्ठा करने वाले कुंए और उसे वापस ज़मीन में डालने वाले पंप लोकप्रिय होते जा रहे हैं।

भारतीय प्रबंधन संस्थान बंगलूरु में लगभग ६० ऐसे कुंए हैं जो बारिश का पानी इकट्ठा करते हैं। और पूरे बंगलूरु में इन्हें खोदने, सफाई और रखरखाव के लिए भोवी समुदाय के लोग मदद कर रहे हैं।

कर्नाटक में सूखे के दूसरे वर्ष में – सरकार ने कुल १७६ तालुकाओं में से १५६ या ८८ प्रतिशत को सूखा प्रभावित घोषित कर दिया है

– कुंए खोदने वालों को पानी के प्रबंधन में केन्द्रीय भूमिका के लिए वापस बुलाया गया है।

स्रोत : http://vikalpsangam.org/article/bhovi-traditional-well-diggers-in-bengaluru/#.XIdasCIzaM8

आई.आई.टी. के भूतपूर्व छात्र ने बनाई बांस की बोतलें

आई.आई.टी. धनबाद के असम के एक भूतपूर्व छात्र ने जो पर्यावरण अनुकूल बोतल तैरूार की है, उसने ५ अक्तूबर २०१८ को आने के बाद से इंटरनैट पर धूम मचा दी है। पूरी तरह से बांस से बनी इस प्राकृतिक बांस की बोतल को अलग अलग आकार में रु.४०० – रु.६०० के बीच खरीदा जा सकता है। इसमें एक डाट लगी है और किसी भी अन्य बोतल की तरह इसमें भी पानी को लीक होने के डर के बिना रखा जा सकता है।

प्राकृतिक उत्पाद होने के नाते, इसमें पानी ठंडा और स्वच्छ रहता है और मज़बूत होने के कारण इसे कहीं भी साथ में ले जाया जा सकता है।

स्रोत : http://vikalpsangam.org/article/iit-alumnus-from-assam-develops-bottles-made-of-bamboo/#.XIdc5iIzaM8

मानव हाथी मुठभेड़ को कम करने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग

भारत में, हाथी के अलावा कुछ ही जानवर ऐसे हैं जिनका इतना सांस्कृतिक महत्व है। मानव – हाथी संपर्क का सदियों पुराना और समृद्ध इतिहास है। यह स्वाभाविक है कि इतने लंबे जुड़ाव के दौरान कुछ ऐसी मुठभेड़ भी रही हों जिनका अंत सु:खद न रहा हो।

इस बात की सच्चाई कर्नाटक के हासन की तुलना में और कहीं नहीं देखी जा सकती, जहां एशिया में सबसे अधिक एशियाई हाथी रहते हैं। लेकिन, हासन क्षेत्र कई सालों से मानव – हाथी मुठभेड़ों से घिरा रहा है जिनमें से कई मामलों में मृत्यु तक हुई है। लेकिन, लचीले संरक्षण प्रयासों और हाल के महीनों में प्रौद्योगिकी के चतुर उपयोग के चलते, संभव है कि हासन में जल्द ही हाथियों के साथ शांति की स्थिति प्राप्त हो सकती है।

- हासन कई सालों से मानव – हाथी मुठभेड़ से घिरा रहा है जो कि वन प्राधिकारियों के लिए एक बड़ी चुनौती है, जो कई दशकों से फसलों को नुक्सान पहुंचाने वाले हाथियों को पुनर्स्थापित करते आए हैं।
- तमिल नाडू के वालपराई क्षेत्र के हाथी गलियारे में लगाए गए एकीकृत चेतावनी संयंत्र के जैसा ही एक संयंत्र यहां भी लगाया गया है।
- क्षेत्र में मानव – हाथी मुठभेड़ के कारण होने वाली मृत्यु की दर शून्य हो गई है।

स्रोत : http://vikalpsangam.org/article/ping-elephants-ahead-reducing-human-elephant-conflict-one-sms-at-a-time/#.XIdb7yIzaM8

◆◆

२. दूरदर्शी लोग

गांधीजी और स्वराज

किशोर सेन्त

'मेरे विचार से, हमने स्वराज शब्द का उपयोग उसके असली महत्व को समझे बिना किया है।'

एम.के.गांधी, 'हिंद स्वराज'

परिचय

स्वराज, गांधी के अन्य विचारों और उपयोगों की तरह ही, को कई मायनों में समझा गया और लागू किया गया और ऐसे कारणों से भी जो गांधी जी ने कभी सोचे भी नहीं होंगे। इसे घरेलू शासन या स्व–शासन, स्व–निर्धारण, राजनीतिक स्वायत्तता, स्थानीय स्व–शासन और पंचायती राज से भी जोड़ा गया है। यह सभी अवधारणाएं राष्ट्र – राज्य की राजनीति के अंतर्गत स्थित हैं। इसके कारण व्यक्तिगत, सामाजिक और पारिस्थितिक कार्यक्षेत्रों में स्व का महत्वपूर्ण विचार (अधिकार, प्रकाश और जिम्मेदारी व प्रयास के नियंत्रण के रूप में) अस्पष्ट हो गया है। इसने गांव या ग्राम स्वराज की गांधी की दूसरी मौलिक अवधारणाओं को सत्य और अहिंसा पर आधारित राष्ट्रीय और विश्व व्यवस्था के निर्माण के लिए मूल तत्व के रूप में विकसित होने से भी रोका है।

इस लेख का उद्देश्य है कि गांधी के स्वराज के इन दो मूल तात्पर्यों को उन्हीं के लेखों, खासकर 'हिंद स्वराज' की जांच के माध्यम से पुन: वापस स्थापित किया जाए।

हिंद स्वराज में स्वराज

सबसे पहले हमें याद रखना चाहिए कि हिंद स्वराज का पाठ प्रमुख रूप से स्वराज के अर्थ के विषय पर पाठक और संपादक के बीच एक संवाद है। शुरुआत में ही ङ्कपाठकफ स्वराज पर अपनी स्थिति को स्पष्ट करते हुए उसे भारत के लिए लोगों की घरेलू शासन या राष्ट्रीय स्वतंत्रता की मांग के रूप में स्थापित करता है और गांधी से

संपादक के रूप में उनके विचार पूछता है। पूरे पाठ में स्वराज के बारे में सवाल पूछे गए हैं और उनके जवाब दिए गए हैं कि इसे कैसे प्राप्त किया जा सकता है और इससे क्या प्राप्त हो सकता है। अध्याय ४ में, 'स्वराज क्या है?' इस प्रश्न को स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किया गया है और पाठक की स्थिति बताई गई है कि भारत में अंग्रज़ी शासन और संस्थान होने चाहिएं लेकिन अंग्रेज़ी के बिना। गांधी के विचार, जो कि मौलिक रूप से इससे अलग हैं, उन्हें यहां प्रस्तुत नहीं किया गया है लेकिन अपेक्षा की गई है कि वे 'स्वत: इस चर्चा के दौरान खुद को विकसित करेंगे', क्योंकि, 'मेरे (गांधी) लिए स्वराज के वास्तविक रूप को समझना उतना ही मुश्किल है जितना कि आप (पाठक) को आसान लगता है'। यह गांधी के दृष्टिकोण को दर्शाता है कि चर्चा एक ऐसा तरीका है जिसके माध्यम से परस्पर सार्थक सत्य तक पहुंचा जा सकता है।

स्वराज के बारे में गांधी के विचार हिंद स्वराज के बाद के अध्यायों में विकसित किए गए हैं, जो कि पाठक के स्वराज के विचारों के परिणामस्वरूप 'इंग्लैंड की दयनीय स्थिति' और इंग्लैंड द्वारा शासित ङ्गभारत की विकट स्थितिफके बारे में बात करते हैं। इंग्लैंड और यूरोप के मामले में उनकी दुर्दशा के पीछे उनकी सभ्यता में कारण बताए गए हैं। स्वराज पर गांधी के अपने विचारों के स्रोत के रूप में वे भारतीय सभ्यता को टटोलते हैं और सच्ची सभ्यता की अपनी अवधारणा का उदाहरण इस तरह से देते हैं कि '..आचरण का वह तरीका... जो मनुष्य को उसके कर्तव्य का पथ दिखाता है। कर्तव्य और नैतिकता का पालन परिवर्तनीय शब्द हैं। नैतिकता का पालन करना हमारे दिमाग और जुनून पर महारत हासिल करना है। ऐसा करके हम खुद को जानते हैं।'

यहां स्वराज का विचार जीवन के उस उद्देश्य से जुड़ा है जो कर्तव्य का पालन करना है, जो गांधी के अनुसार, भारत को विदेशी शासन से मुक्त कराने और ईश्वर की रचना की सेवा करना है। इसके लिए हमारे दिमाग और जुनून पर महारत हासिल करना एक और योग्यता है। यहां स्व–नियंत्रण या आत्म–अनुशासन के माध्यम से आत्मबोध होना ही स्वराज का असल अर्थ है...

स्व–नियंत्रण के माध्यम से आत्मबोध के रूप में स्वराज

स्व–नियंत्रण के रूप में स्वराज का विचार गांधी के अन्य लेखों और वार्ताओं में विस्तृत रूप से बताया गया है, खासकर 'स्वास्थ्य की कुंजी' 'आत्म संयम बनाम आत्म भोग' और साबरमति आश्रम में गीता के १९२६ प्रवचन। यहां स्व या स्वयं पर ज़ोर दिया गया है। गांधी के लिए स्वयं व्यक्तिगत मन– आत्मा– शरीर से निकलकर, मानस – आत्मा– पिंड, ब्रह्मांड तक जाता है जो कि परमात्मन – ब्रह्मांड है, जो पांच तत्वों या पंचतत्व से बना है – धरती या पृथ्वी, जल या पानी, हवा या वायु, प्रकाश या तेजस, ईथर या आकाश। गांधीजी के शब्दों में, 'आकाश शब्द का अनुवाद करना मुश्किल है क्योंकि वास्तव में अन्य चार तत्व तथाकथित हैं। क्योंकि पानी का मूल केवल जल नहीं है, और न ही वायु हवा या पृथ्वी धरती, या तेजस प्रकाश ... मूल रूप से सभी पांच उतने ही जीवंत है जितना कि जीवन। स्वराज की इस खोज में उद्देश्य है आत्म–प्राप्ति, आत्म–शुद्धि और आत्म–परित्याग के माध्यम से आत्मबोध की प्राप्ति है। यह अच्छे और बुरे, दिव्यता और नीरसता के अपने गुणों के साथ बनी हमारे उच्च और निम्न व्यक्तित्वों की पहचान पर आधारित है। इच्छाओं और जुनून पर नियंत्रण और उपवास, मौन, ध्यान, प्रार्थना तथा मानवता और प्रकृति की सेवा के अनुशासनपूर्ण कार्यों के माध्यम से आत्मबोध प्राप्त किया जाता है।

ग्राम आधारित रचनात्मक कार्यों के रूप में स्वराज

स्वतंत्रता आंदोलन और सामाजिक सुधार के संदर्भ में स्वतंत्रता–पूर्व भारत में मानवता और प्रकृति की सेवा के रूप में पूजनीय कार्य को रचनात्मक कार्यक्रम के रूप में तैयार किया गया था। इसमें सांप्रदायिक सौहार्द, अछूत प्रथा को दूर करना, स्वदेशी के लिए खादी और ग्रामोद्योग को बढ़ावा देना, ग्राम स्वराज या ग्राम आत्म–निर्भरता, नशीली वस्तुओं का बहिष्कार, उत्पीड़ित और वंचितों का उत्थान, जेन्डर समानता आदि शामिल हैं। गांधी के अनुसार, रचनात्मक कार्य के साथ–साथ राजनीति के बाहर आत्म–बोध का प्रयास स्वराज का माध्यम और अंत, दोनों यही हैं। जैसे कि अनुराधा वीरावली ने बताया 'उनका (गांधी का) पूर्ण स्वराज के लिए 'रचनात्मक कार्यक्रम' था ... यह हासिल करने की कल्पना थी कि ... राज्य सत्ता की संरचना और सशक्तिकरण निरर्थक हो जाए।' इसमें मार्गदर्शक सिद्धांत है लोगों की संप्रभुता जो कि राज्य की संप्रभुता से अलग है।

गांधी द्वारा स्वतंत्रता से पहले और बाद में ग्राम केन्द्रित स्वराज की पुष्टि

हिंद स्वराज पर गांधी के विचारों की उनके राजनीतिक उत्तराधिकारी जवाहरलाल नेहरू के साथ १९४५ के पत्राचार में फिर से पुष्टि की गई है जिसमें उन्होंने ग्राम स्वराज के अपने दृष्टिकोण को भी रेखांकित किया है। उनके पहले पत्र, जो कि हिंदुस्तानी भाषा में लिखा गया है, गांधी स्वतंत्र भारत में स्वराज के अपने दृष्टिकोण को इन शब्दों में रेखांकित करते हैं, 'मैं आश्वस्त हूं कि अगर भारत सच्चे रूप में स्वतंत्र प्राप्त करता है, और भारत के माध्यम से विश्व भी, तो कभी–न–कभी इस बात को स्वीकारना ही होगा कि लोगों को शहरों में नहीं गांवों में रहना होगा, महलों में नहीं झोपड़ियों में रहना होगा। करोड़ों लोग कभी भी शहरों और महलों में एक दूसरे के साथ शांति से नहीं जी पाएंगे। तब उनके पास हिंसा और झूठ के अलावा और कोई साधन नहीं बचेगा। मैं मानता हूं कि सत्य और अहिंसा के बिना मानवता का केवल विनाश ही होगा। हम सत्य और अहिंसा को केवल गांवों के सादे

जीवन में ही महसूस कर सकते हैं और यह सादगी सबसे अच्छी तरह से चरखे और जो कुछ भी चरखा दर्शाता है, उस में पाई जा सकती है। मुझे डर नहीं है कि आज पूरा विश्व गलत दिशा में चल रहा है। संभव है कि भारत भी उसी दिशा में चलेगा और जैसे कि कहावत है, उसी आग में जल जाएगा जैसे कि एक परवाना अंततः उसी शमां में जल जाता है जिसके इर्द–गिर्द वो जमकर नाचता है। लेकिन मेरी अंतिम सांस तक यह मेरा कर्तव्य है कि मैं भारत को और पूरे विश्व को ऐसी कयामत से बचाने की कोशिश करूं।'

गांधी स्पष्ट करते हैं कि वे गांवों के वर्तमान स्वरूप की बात नहीं कर रहे, बल्कि गांवों के ऐसे रूप की बात कर रहे हैं जो वो उनके भविष्य के लिए कल्पना करते हैं। ङ्गमेरे आदर्श गांव में बुद्धिजीवी मनुष्य होंगे। वे जानवरों की तरह गंदगी और अंधकार में नहीं जिएंगे। पुरुष और औरतें विश्व में किसी के भी सामने अपनी मजबूती बनाए रखने के लिए आज़ाद होंगे। न महामारी होगी, न हैजा, न ही चेचक; कोई भी बेकार नहीं बैठेगा, कोई भी विलासिता में लिप्त नहीं होगा। सब का अपने हिस्से का शारीरिक श्रम करना होगा... रेलवे, डाक और टेलिग्राफ की परिकल्पना संभव है ... और इसी तरह अन्य चीज़ों की भी।

यहां नेहरू–गांधी के मतभेदों की बात करने की जगह नहीं है। इतना ही कहना काफी है कि नेहरू गांधी के मूल विचार कि गांव के जीवन में सत्य और अहिंसा का निवास है, से सहमत नहीं हैं, हांलाकि वे यह मानते हैं कि विकास का वर्तमान रास्ता संभवतः विनाश की ओर ले जाएगा। उनके शब्दों में, 'आप की बात सही है कि विश्व या कम–से–कम उसका अधिकांश भाग आत्महत्या करता हुआ प्रतीत होता है। संभव है कि सभ्यता में इस बुराई के बीज के पनपने का यही अंत होगा। मैं सोचता हूं कि ऐसा ही है। इस बुराई को कैसे खत्म किया जाए और पहले की तरह ही वर्तमान में भी अच्छाई को कैसे कायम रखा जाए, यह हमारे सामने की चुनौती है।'

गांधी के स्वराज के दृष्टिकोण की पुष्टि और इसे वास्तविकता में बदलने की रणनीति एक संक्षिप्त लेख में प्रस्तावित की गई है जिसका शीर्षक है 'आखिरी वसीयतनामा और साक्ष्य' जिसे उनकी ३० जनवरी १९४८ को हत्या होने से पहले वाली रात को लिखा गया था। इसमें वे पहचानते हैं कि 'भारत को राजनीतिक स्वतंत्रता तो मिल गई है ... लेकिन अभी उसे अपने शहरों और कस्बों से अलग, सात लाख गांवों के संदर्भ में सामाजिक, नैतिक और आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करना बाकी है। भारत के लोकतांत्रिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उसे सैन्य शक्ति के मुकाबले नागरिकता को मजबूत करने के संघर्ष से गुज़रना पड़ेगा। इसे राजनीतिक दलों और सांप्रदायिक निकायों के साथ अस्वस्थ मुकाबले से बचाना ज़रूरी है।'

यहां कुछ तीखे वाक्यों में गांवों के स्वराज के लिए कार्य और रणनीतियां पेश की गई हैं। इसे लागू करने के लिए गांधी सुझाव देते हैं कि एक राजनीतिक दल के रूप में कांग्रेस का विघटन कर देना चाहिए और इसे लोक सेवा संघ के रूप में पंचायतों का गठन करना चाहिए, जिसकी शुरुआत पांच वयस्कों की एक मूल इकाई से हो, और वह ऐसी ही अन्य ईकाइयों के साथ मिलकर व्यापक स्तर पर शासन के लिए प्रतिनिधियों का चुनाव करे, और इसी प्रकार पूरे देश के स्तर पर शासन व्यवस्था तैयार की जाए। लोक सेवकों के लिए आचरण के कुछ नियम और जिम्मेदारियां दी गई हैं : खादी पहनने की आदत, मादक द्रव्यों का त्याग, अस्पृश्यता का त्याग, सांप्रदायिक सद्भाव में विश्वास और सभी धर्मो के प्रति बराबर सम्मान और जाति, पंथ या लिंग के बावजूद भी सभी के लिए अवसरों और स्तर की समानता में विश्वास। जिम्मेदारियों में शामिल है ग्रामीण कार्यकर्ताओं का नामांकन और प्रशिक्षण, कृषि और शिल्प के माध्यम से ग्रामीण लोगों को आत्मनिर्भर बनाने के लिए संगठित करना, स्वच्छता में गांव वालों का प्रशिक्षण, नई तालीम की तर्ज पर गांव वालों को आजीवन शिक्षा के लिए संगठित करना, और मताधिकार के अधिकार दिलवाने के लिए मतदाता सूचि में सभी योग्य लोगों का शामिल किया जाना सुनिश्चित करना। अपने काम के लिए संघ गांव वालों व अन्य लोगों से आर्थिक मदद जुटाएगा, विशेषकर 'गरीब की कौड़ी' का योगदान सुनिश्चित करते हुए।

स्वतंत्रता के बाद ग्राम स्वराज

२०वीं सदी के मध्य की वैश्विक भू–राजनीतिक वास्तविकता को देखते हुए, यह स्वाभाविक था कि स्वराज या स्व–शासन को राष्ट्र – राज्य की संप्रभुता के संदर्भ में रखा जाए। गांधी ने इस बात को मान्यता देते हुए वयस्कों को मतदाताओं के रूप में पंजीकृत करने की जिम्मेदारी को लोक सेवक के कर्तव्यों में शामिल किया है। हांलाकि, लोक सेवकों का प्रमुख कर्तव्य गांव स्वराज के अनुकूल गतिविधियों का संचालन करना था। इस प्रकार, स्वराज को आत्म–प्राप्ति और ग्राम स्वराज के रूप में, लोगों की संप्रभुता के सिद्धांत के आधार पर, मौजूदा उपनिवेशवादी राजनीति के गर्भ में रोपित और पोषित किया जाना था। हांलाकि, गांधी की सलाह के विपरीत, कांग्रेस को भंग नहीं किया गया, लेकिन गांधीवादी रचनात्मक कार्यकर्ताओं ने उनके दृष्टिकोण को साकार करने के लिए सर्व सेवा संघ की स्थापना की। ग्राम स्वराज के लिए प्रमुख ज़ोर जो इसके तत्वावधान में उभरा, वो था भूदान–ग्रामदान आंदोलन, जिसका नेतृत्व पदयात्रा के रूप में विनोबा भावे ने किया। इस आंदोलन ने समर्पित समर्थकों को आकर्षित किया जैसे कि जयप्रकाश नरायण, अन्नासाहेब सहस्रबुधे, दादा धर्माधिकारी, धीरेन मजूमदार, विमला ठक्कर, मनमोहन चौधरी, ठाकुरदास बांग, गोविंदराव देशपांडे, और सिद्धराज धड्ढा। बड़े ज़मीनदारों द्वारा दान की गई हज़ारों एकड़ ज़मीन भूमिहीनों में बांटी गई। लेकिन, शुरुआती

सफलता के बाद, ज़मीनों और लोगों को समेकित करने का मुश्किल काम महत्वपूर्ण पैमाने पर नहीं किया गया और ग्रामीण विकास के प्रमुख रास्ते पर इस आंदोलन का प्रभाव विफल हो गया।

राष्ट्रीय नीति स्तर पर, संविधान सभा में गरमागरम बहस के बाद, ग्राम स्वराज की अभिव्यक्ति के रूप में पंचायत राज को बढ़ावा देने को संविधान में एक निर्देशक सिद्धांत के रूप में शामिल किया गया। इसे ज़मीनी स्तर पर व्यावहारिक रूप देने के लिए कानून बनाया गया। इसमें गांधी के दृष्टिकोण के अनुसार, स्वायत्तता के बजाए अधीनस्थता का सिद्धांत मार्गदर्शक विचार रहा। इसके अलावा महत्वपूण यह है कि वैकल्पिक आंदोलन के लिए, जैसा कि सुरिन्दर एस. जोधका ने कहा है, '...गांधी की विज्ञान की आलोचना और वैकल्पिक जीवन के उनके विचार ...लोकप्रिय रहे हैं ... पर्यावरणविदों के बीच ... और कई सक्रिय समूहों के बीच...।'

अंत में क्रांतिकारी पारिस्थितिकीय लोगतंत्र की मूल संरचना से प्राप्त विकल्प ढांचे के संबंध में स्वराज के बारे में एक विचार। उदयपुर में नवंबर २०१७ में हुए विकल्प संगम में, जय सेन ने सुझाव दिया कि स्वराज को वैकल्पिक ढांचे में मुख्य मूल के रूप में उजागर किया जाए। उस समय मैंने इस विचार का समर्थन किया। लेकिन अब, स्वराज के विषय पर गांधी के विचारों को गहराई से समझने के बाद, मैं सुझाव देना चाहता हूं कि गांधी व अन्य लोगों के स्वराज पर विचारों को ध्यान में रखते हुए इस मामले पर और बहस की जानी चाहिए। इनमें सांख्यिकीविद्, तकनीकी – प्रबंधकीय, वाणिज्यिक और साम्यवादी दृष्टिकोण शामिल किए जाने चाहिए और उनमें निहित मनुष्यों के बीच पारस्परिक तथा मानव–ईश्वरीय रिश्तों की धारणाएं भी।

लेखक के बारे में : किशोर सेन्त दक्षिण राजस्थान की मेवाड़ अरावली श्रृंखला में आदिवासी समुदाय आधारित पारिस्थितिकीय पुनर्जनन के काम में शामिल रहे हैं। वर्तमान में वे गांधी की आध्यात्मिक पारिस्थितिकी को समझने की कोशिश कर रहे हैं। वे उदयपुर में रहते हैं।

◆◆

३. तर्क – वितर्क

महात्मा और पंडित

असीम श्रीवास्तव

''इस स्वराज को सपना मत समझना।''

– महात्मा गांधी

स्वराज को पहली बार एक पुरानी भारतीय भाषा, या शायद किसी भारतीय स्थानीय भाषा में अवधारणा के रूप में लिखा गया था। इस मायने में, यह (लोकतंत्र की तरह ग्रीक भाषा के शब्द 'डेमोस' जैसा नहीं है) भारत देश में ही उत्पन्न हुआ।

आइए 'स्वराज' शब्द पर विचार करते हैं। इसकी संस्कृत भाषा में व्युत्पत्ति साधारण और स्वाभाविक है : स्व .राज्य, मतलब कि अपना शासन। विशेषण शब्द 'प्राकृतिक' को कुदरती के रूप में समझा जा सकता है, या मानव स्वभाव की अभिव्यक्ति के रूप में समझा जा सकता है जिससे कि हमारे आसपास की प्रकृति के लय में रहे।

२१वीं सदी में स्वराज के बारे में बात करते हुए, इसकी आश्वासन रहता है कि हम एक ऐसे स्वप्न को दोबारा प्राप्त करने और पुनर्जीवित करने का लक्ष्य बना रहे हैं, जो कि भारतीय दार्शनिक विचार, संस्कृति और राजनीतिक अभ्यास की एक मजबूत स्वदेशी धारा से संबंधित है। यह याद रखना ज़रूरी है कि यह धारणाएं (संस्कृत और पाली में) – जिनसे आधुनिक भारतीय लोकतंत्र की भाषा का कुछ अंश प्राप्त होता है – औपनिवेशिक काल से कई सदियों पुरानी हैं, कई बार तो कई हज़ार साल पुरानी, और किसी भी तरह से ये पश्चिमी देशों से लोकर भारत में अनुवादित नहीं की गई हैं। इसका मतलब है कि यह धारणाएं भारतीय इतिहास के किसी समय में उपयोग की गई होंगी और फिर बाद में ये काफी हद तक निष्क्रिय हो गई, अक्सर जिसका कारण रहा आधुनिक काल में औपनिवेशिक शासन।

राजनीतिक स्तर पर, जैसा कि महात्मा गांधी ने स्वराज को समझाया था, यह संसदीय लोकतंत्र तो बिल्कुल नहीं है। वे तो आधुनिक संसद की ''गुलामी के प्रतीक'' के रूप में हंसी उड़ाया करते थे; यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि अक्सर स्वराज को ङ्गलोकतंत्रफ के रूप में समझा जाता है। वास्तव में, इनका संज्ञानात्मक आधार एक दूसरे से एकदम अलग है।

सबसे पहले, स्वराज सार्वजनिक राजनीति से मेल नहीं खाता, जो कि आज के लोकतंत्रों की रोज़मर्रा की वास्तविकता है। दूसरा, आधुनिक लोकतंत्र हर व्यक्ति की राज्य के साथ सीधे, बिना हस्तक्षेप के रिश्ते पर ज़ोर देता है जहां उसे कानूनी रूप से नागरिकता के अधिकार प्राप्त

हों। तीसरा, आधुनिक लोकतंत्र में, एक व्यक्ति को, 'स्वतंत्रता' के नाम पर, लगभग उदासीनता के साथ, उसकी रुचियों और चाहतों पर छोड़ दिया जाता है (आधुनिक अर्थशास्त्र पूरी तरह से इसी अवधारणा पर आधारित है)।

गांधी के स्वराज का विचार इससे बिल्कुल अलग है। इसमें व्यक्ति या समुदाय की चुनाव करने की स्वायत्तता पर ज़ोर दिया जाता है, बजाए इसके कि निष्क्रिय रूप से उन्हें चुनने के लिए दी गई एक सीमित चुनाव सूचि को स्वीकार कर लिया जाए।

आधुनिक विश्व में बदलाव की तेज़ रफ़्तार को देखते हुए, ७० वर्ष किसी भी स्वतंत्र देश के जीवन का एक लंबा समय है। यह भारत जैसे विशाल देश से भी गरीबी खत्म करने के लिए पर्याप्त समय होना चाहिए था, यह देखते हुए कि देश में कितनी आर्थिक तरक्की हुई है। कई देशों ने ऐसा किया है। लेकिन, सच यह है कि आज, २०१७ में, गरीबों की आधिकारिक संख्या, जो कि अपने आप में सीमित अनुमान मात्र है, १९४७ में अखण्ड भारत की पूरी जनसंख्या से भी अधिक है। माना जाता था कि आर्थिक विकास गरीबी की चुनौती से निपट लेगा। ऐसा क्यों नहीं हुआ? क्या संभव है कि हमें विकास की प्रकृति और चरित्र के बारे में ठगा गया हो? क्या यह हमेशा से ही कुछ अर्थशास्त्रियों के अनुसार ङ्कस्वतंत्रताफ के बजाए, संभवत: युद्ध का ही एक छिपा हुआ रूप था, एक ऐसी सच्चाई जा अब हर महीने, हर सप्ताह और भी स्पष्ट होती जा रही है, जिसे व्यंजनापूर्ण रूप से 'विस्थापन' के रूप में वर्णित किया जाता है, और जिसके अंतर्गत उपमहद्वीप में प्रणालीबद्ध तरीके से पारिस्थितिकीय लूट की गई है, और यह सब विकास की प्रक्रिया के नाम पर।

विकास शुरु से ही एक औपनिवेशी विचार था। इस छिपी हुई वास्तविकता को समझने के लिए, १९४० के दशक में वापस जाना सही होगा, जब विकास के विचार को पहली बार एक बढ़ती हुई शाही शक्ति द्वारा तैयार किया गया था, और इसलिए भी क्योंकि १९४० के दशक में ही देश के पहे प्रधानमंत्री ने गांधी के स्वराज के विचार को खारिज कर दिया था। यह सब जानते हैं कि जवाहर लाल नेहरू का स्वतंत्र भारत किस प्रकार अपने भाग्य को साकार करेगा के सवाल का जवाब गांधी के जवाब से काफ़ी अलग था। एक प्रतिबद्ध आधुनिककार के रूप में, नेहरू ने स्वतंत्रता से पहले ही गांधी के स्वराज के विचार को अस्वीकार कर दिया था।

आधुनिक समय के महानगरीय भारत में जीवन के बारे में गंभीर भविष्यवाणी करने वाले एक वाक्य में गांधी ने अपने विचार को इन शब्दों में व्यक्त किया था : 'मुझे विश्वास है कि यदि भारत को सच्ची स्वतंत्रता प्राप्त करनी है और भारत के माध्यम से विश्व को भी, तो कभी–न–कभी इस वास्तविकता को पहचानना होगा कि लोगों को शहरों के बजाए गांवों, और महलों के बजाए झोपड़ियों में रहना शुरु करना होगा। करोड़ों लोग कभी भी शहरों और कस्बों में एक दूसरे के साथ शांति से नहीं जी सकते। फिर उनके पास कोई चारा नहीं बचेगा और वे हिंसा व झूठ का सहारा लेने के लिए मजबूर हो जाएंगे। क्ष्ध्पमेरा विश्वास है कि सत्य और अहिंसा के बिना मानवता का केवल विनाश ही हो सकता है।'

जवाहर लाल नेहरू को लगता था कि भारत का शहरीकरण और औद्योगिकरण होना ज़रूरी है और वे ङ्कसबके लिए खाद्यान्न, कपड़े, आवास, शिक्षा, स्वच्छता...फ प्राप्त करने के संदर्भ में अविलंबिता व्यक्त करते थे। उनका कहना था कि 'इसी उद्देश्य के मद्देनज़र, हमें विशेष रूप से पता लगाना चाहिए कि जल्द से जल्द इन्हें कैसे प्राप्त किया जा सकता है।' उन्हें ऐसा भी लगता था कि 'यातायात के आधुनिक साधन व अन्य कई आधुनिक विकास की चीज़ें चलती रहनी चाहिए और उनका विकास किया जाना अनिवार्य है। इनसे बचने का कोई तरीका नहीं है बजाए इसके कि उन्हें प्राप्त कर लिया जाए। और अगर ऐसा है तो यह मन लेना चाहिए कि कुछ हद तक भारी उद्योग मौजूद हैं। नेहरू अक्सर चिंता करते थे कि यह किस हद तक पूरी तरह से ग्रामीण समाज में अपनी जगह बना सकता है।' उनकी आशा थी कि 'भारी या हल्के उद्योगों को जहां तक हो सके विकेन्द्रीकृत किया जा सके।' लेकिन साथ ही उन्हें डर भी था कि 'अगर देश में दो तरह की अर्थव्यवस्था मौजूद होगी तो या तो अंतर्द्वन्द्व की स्थिति पैदा हो जाएगी या फिर इनमें से एक दूसरे को पराजित कर देगी।' एक आधुनिक समाजवादी होने के नाते नेहरू एक नियंत्रित शहरीकरण चाहते थे।

नेहरू स्पष्ट रूप से गांधी की हिंद स्वराज की सोच को नकारते थे : 'मैंने हिंद स्वराज को कई वर्ष पहले पढ़ा था और अब उसकी केवल एक धुंधली सी तस्वीर मेरे दिमाग में रह गई है। लेकिन जब मैंने इसे २० साल पहले पढ़ा था तब भी मुझे यह पूरी तरह से कल्पनामयी लगा था।' गांधी के खुद दिए गए इसके विरीत वक्तव्य के बावजूद, नेहरू को लगता था कि हिंद स्वराज के छपने के बाद से गांधी के खुद के लेख और भाषण 'उनकी पुरानी सोच से आग बढ़ चुके थे और वे अब आधुनिक चीज़ों का समर्थन करने लगे थे।' 'इसलिए वे अचंभित थे' जब गांधी ने उन्हें लिखा कि पहली बार किताब लिखे जाने के बाद से गांधी के विचारों में बहुत कम तब्दीली आई थी। उनका कहना था कि गांधी की 'पुरानी तस्वीर' को कांग्रेस ने कभी गंभीरता से नहीं लिया और न ही गांधी ने उनसे इसे 'कुछ छोटे से पहलुओं के अलावा' लागू करने के लिए कहा। गांधी ने ऐसे ही ''ग्राम स्वराज'' का सपना नहीं देख लिया था। १९०९ में, उन्होंने उनका सबसे महत्वपूर्ण कार्य हिंद स्वराज प्रकाशित किया था। स्वराज शब्द

के जुड़ाव काफी नाटकीय रूप से बदल जाते हैं जब तिलक १८९० के दशक में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के संदर्भ में इसका उपयोग करते हैं। यहां यह स्वाधीनता और स्वतंत्रता के आधुनिक पाश्चात्य विचारों के बराबर दिखाई देता है। जब दादाभाई नारोजी ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के राष्ट्रपति के रूप में १९०६ में घोषणा की थी कि स्वराज राष्ट्रीय आंदोलन का उद्देश्य होगा, तब उनके मन में इसकी यही सीमित रूप ही मौजूद था। गांधी का सपना इससे कहीं आगे जाता है। नेहरू सतत न्याय पर सामूहिक स्पष्टीकरण के पक्ष में थे, और उन्हें कोई शक़ नहीं था कि यह रास्ता (पूरे विश्व के साथ–साथ भारत के लिए भी) पूरी तरह से ग़लत भी हो सकता है। इसे अगर और ज़्यादा न्यायपूर्णता के साथ कहा जाए तो – नेहरू के मन में सततता पर कोई विचार न होते हुए, और न ही आधुनिकता पर उन्हें कोई नैतिक रूप से संदेह ही था, हालांकि युद्ध और उपनिवेशवाद इसके स्वाभाविक साथी थे – उनका मानना था कि वे जो व्यक्त और उम्मीद कर रहे हैं, उसमें न्याय और स्पष्टता दोनों है। नेहरू का मानना था कि गांधी का स्वराज का विचार कालभ्रमित और पुराना था।

दोबारा विचार किया जाए तो, नेहरू का बहुत बड़ा भ्रम था कि आधुनिक दुनिया की 'अच्छाई' किसी तरह से बचा कर रखी जा सकती है और दूसरी ओर 'बुराई का बीज' (सत्ता की भूख) को विनाशकारी लोभ के जंगल में पनपने के लिए छोड़ दिया जाए, एक ऐसा अनिवार्य परिणाम जिसका हमें २१वीं सदी में पूरे विश्व में सामना करना पड़ रहा है, जब कि बर्बरता हर घर को अपना निशाना बनाए दरवाज़े पर खड़ी है। गांधी के डर की आज विश्व स्तर पर पुष्टि हो रही है।

एक विचार के रूप में 'विकास' का जन्म पश्चिमी, उद्योगवाद के नए वारिस संयुक्त राज्य में हुआ था।' विकास के विचार का जन्म हमारे स्वतंत्रता सेनानियों के दिला और दिमाग में नहीं, बल्कि वॉशिंगटन डी.सी. और ब्रेटन वुड्स, न्यू हैम्पशर में हुआ था, और वह भी भारत की १९४७ में स्वतंत्रता से काफी पहले, यह एक ऐसी सच्चाई है जिसे ज़्यादातर बुद्धिजीवी और विद्वान आसानी से स्वीकार नहीं करते (शायद एसके पीछे राष्ट्रीय घमंड को कारण माना जा सकता है)। और इस सच्चाई की स्वीकार्यता तो और भी कम है कि 'विकास' एक ऐसा विचार था 'जिसका समय आ चुका था', एक ऐसा विचार जिसे विश्व के नए शासकों ने, विश्व युद्ध २ में सहयोगी पक्ष की जीत के बाद, अपने नए भूमण्डलीय साम्राज्य की सीमाएं बढ़ाने और पुन: निर्धारित करने के लिए उपयोगी पाया, कि यह विचार ('लोकतंत्र' और 'मानव अधिकार' के साथ मिलकर) 'श्वेत पुरुषों के भार' और 'ईसाई मिशन' (जो अपना समय पूरा कर चुके थे) का एक नया अवतार था, जिससे उन्हें अपने हित में विश्व पर राज करने का अधिकार प्राप्त हुआ (जिससे कि वे खुद को समाजवाद के डर से बचा पाएं)। इस सब को स्वीकार करने का मतलब था कि हम सब का मिलाजुला राष्ट्रीय पाखंड उजागर हो जाता। इसलिए हमें आज भी अपने नए २००० रुपए के नोट पर मुस्कुराते हुए महात्मा के चेहरे की ज़रूरत है जिसके पीछे हम अपने झूठ और पापों को छिपा सकें। गांधी के नेतृत्व में हमारे स्वतंत्रता सेनानियों ने 'विकास' के अमरीकी विचार के संदर्भ में लोगों की चुनौतियों और समस्यों के बारे में कुछ नहीं सोचा, इसका कड़ा सबूत है कि यह शब्द भारत के १९४९ के संविधान में कहीं पर लिखा भी नहीं गया। इससे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण है 'विकास' शब्द का भूमण्डलीय चर्चाओं में प्रवेश करने का समय। हांलाकि यह शब्द वैज्ञानिक व अन्य विशिष्ट संदर्भों में काफी समय से उपयोग होता आया है, लेकिन भूमण्डलीय सार्वजनिक नीति की स्तर पर इसका आगमन पहली बार ब्रेटन वुड्स, न्यू हैम्पशर में हुई अति महत्वपूर्ण गोष्ठी में, जुलाई १९४४ में हुआ। अमरीका के उत्तर पूर्व में बसे इन्हीं सुंदर पहाड़ों में विश्व युद्ध २ के अंत में, आज की आर्थिक व्यवस्था की रूपरेखा पहली बार रची गई थी, जिसने उस भूमण्डलीय युग का आग़ाज़ किया, जो कि १९९० में शीत युद्ध के बाद समाजवाद ने औपचारिक रूप से कदम पीछे ले लिये थे। यहां महत्वपूर्ण है कि विश्व युद्ध २ के बाद हमने पश्चिमी नेताओं को गरीबी और अविकास के बारे में बात करते हुए बहुत कम सुना है।

उनके आखिरी वर्षों में, नेहरू ने कुछ संकेत दिए कि उन्हें अपने विकास के विशाल विचार पर पछतावा था, और शायद मन–ही–मन वे महात्मा की दूरदर्शिता की लालसा रखते थे। १९५८ में उन्होंने कुछ सिंचाई अभियंताओं से यह कहा : ''लेकिन, कुछ समय से मैं यह सोचने लगा हूं कि हम 'विशालता के रोग' से जूझ रहे हैं। हम यह दिखाना चाहते हैं कि हम बड़े बांध बना सकते हैं और बड़े बड़े काम कर सकते हैं . . . सिर्फ यह दिखाने के लिए कि हम भी बड़े काम कर सकते हैं, इसके लिए बड़े बड़े प्रायोजन करना और बड़े काम करना, यह अच्छा दृष्टिकोण नहीं है . . . हमें समझना होगा कि हम अपनी समस्याओं का जल्दी और प्रभावकारी हल बड़ी संख्या में लागू की गई छोटी स्कीमों से भी निकाल सकते हैं, खासकर जब छोटी स्कीम के लिए बहंत कम समय की आवश्यकता होती है और जल्द परिणाम प्राप्त होते हैं। इसके अलावा, इन छोटी स्कीमों में हमें लोगों की सहभागिता भी प्राप्त होती है, और इसलिए, ऐसी छोटी स्कीमों में लोगों को जोड़ने का एक सामाजिक महत्व है।

यह सब बहुत पहले की बात है जब विशाल शॉपिंग मॉल, तेज़ रतार ऐक्सप्रैसवे और हवाई अड्डों ने भारत के शहरों में अपना वर्चस्व स्थापित नहीं किया था। लेकिन १९५८ तक भी नेहरू बहुत देर कर चुके थे। पिछले डेढ़ दशक के उनके अपने शब्द और काम ने पहले से ही शक्तिशाली स्थितियां स्थापित कर दी थीं जो आज भी भारत की सांस्कृतिक, राजनीतिक और आर्थिक किस्मत को गहरे तरीके से

आकार दे रही हैं। देश के पहले प्रधानमंत्री की यह देखने में असफलता कि विकास एक आधुनिक और अच्छे से छिपा हुआ औपनिवेशिक विचार है, जिसके कारण करोड़ों लोग – कई हज़ार किसानों जिन्होंने आत्महत्या की से लेकर करोड़ों लोग जिनके जीवन, आजीविकाएं और संस्कृतियां 'राष्ट्रीय हित' में बनाए जा रही 'विकास' परियोजनाओं के लिए जगह बनाने में नष्ट हो गई – सात दशकों से कीमत चुकाते आ रहे हैं।

लेखक के बारे में : असीम श्रीवास्तव दिल्ली में स्थित एक लेखक और पारिस्थितिकीय अर्थशास्त्री हैं। उन्हें मैसेचुसेट्स विश्वविद्यालय से अर्थशास्त्र में पी.एचडी प्राप्त है। उन्होंने आशीष कोठारी के साथ एक किताब भी लिखी है जिसका शीर्षक है चर्निंग द अर्थ : द मेकिंग ऑफ ग्लोबल इंडिया (पेन्गुइन वाइकिंग, नर्द दिल्ली, २०१२), जिसमें उन्होंने १९४७ से लेकर भारत की विकास रणनीति की गंभीर समाजिक–पारिस्थतिकीय आलोचना की है। वर्तमान में वे दो चीज़ों पर काम कर रहे हैं, एक रवीन्द्रनाथ टैगोर की पारिस्थितिकीय सोच, और दूसरा, लोभ की सूत्र–रूपी और दार्शनिक जांच।

नोट : यह लेख सरहद गोखले ने असीम श्रीवास्तव द्वारा लिखे दो अलग–अलग लेखों, ''प्राकृतिक स्वराज'' और ''हू किल्ड स्वराज'' के एक–जैसे तत्वों को शामिल करके बनाया है। इसके लिए लेखके की पूर्व अनुमति ले ली गई थी।

◆◆

४. दृष्टिकोण

बहुसंख्यकों का अत्याचार

के.पी. शंकरन

ज़्यादातर लोग यह नहीं जानते कि लोकतंत्र, जिसका आज विश्व भर में जश्न मनाया जाता है, वह महात्मा गांधी के लिए एक अभिशाप था। उनका संसद जैसे संस्थान के लिए तिरस्कार १९०९ में ही स्पष्ट हो गया था जब, हिंद स्वराज में लिखते हुए, उन्होंने इसे ''देश के लिए एक महंगा खिलौना'' बताया था। गांधी, स्वाभाविक रूप से, उस समय की अंग्रेज़ों की संसद के संदर्भ में बात कर रहे थे। लेकिन उनका असंदिग्ध विश्वास कि लोकतंत्र का संसदीय स्वरूप भारत के लिए उचित नहीं है, यह तब ही स्पष्ट हो गया था जब उन्होंने हिंद स्वराज में लिखा था, ''मैं भगवान से प्रार्थना करता हूं कि भारत कभी उस दुर्दशा में न पहुंचे''।

गांधी निश्चित रूप से शुद्ध लोकतांत्रिक थे। वे जीवनभर लोकतांत्रिक अधिकारों के हिमायती रहे और उन्होंने हमेशा लोकतांत्रिक संघों को अपना सहयोग और आवाज़ दी, चाहें वे कहीं भी हों। लेकिन जिस लोकतंत्र का गांधी समर्थन करते थे वह लोकतंत्र का प्रत्यक्ष रूप है, न कि प्रतिनिधित्व लोकतंत्र।

प्रतिनिधि लोकतंत्र फ्रांसिसी क्रांति के बाद जन्मे राष्ट्र राज्य के विचार की उत्पत्ति थी। यह निश्चित रूप से इसके विकल्प की तुलना में ठीक ही लगता है – तानाशाही जो संभवत: फासीवाद को जन्म दे सकती थी। लेकिन, गांधी के लिए, राष्ट्र राज्य का विचार ही अपने आप में एक जाल है और उन्हें डर था कि एक बार भारत के लोग इसे अपना लेंगे, तो देश संभावित तानाशाही के खतरे से बचने के लिए हमेशा के लिए सरकार का प्रतिनिधित्व रूप चलाने के लिए मजबूर हो जाएंगे। प्रतिनिधित्व लोकतंत्र के लिए उनकी यह नापसंदगी उनके इस विश्वास से जन्मा कि भारत जैसे बहुसांस्कृतिक और बहुधार्मिक संदर्भ में, कुछ ही समय में यह संस्थान लोगों के विरुद्ध संस्थान का रूप ले लेगा। गांधी लोकतंत्र के पहले ऐसे सिद्धांतकार थे जो इस खतरे को देख पाए।

इसी संभावना को रोकने के लिए गांधी ने आपस में जुड़े हुए, आत्म निर्भर, गैर–श्रेणीबद्ध, समाजवादी ग्रामीण समुदायों के निर्माण का सपना देखा था जिनका नाम स्वराज होता, और उनमें से हर एक प्रत्यक्ष लोकतंत्र के रूप में काम करता। गांधी ने ''स्वराज'' को लागू करने के लिए अपने निर्माण कार्यक्रम की रचना की। उनका मानना था कि अगर ''स्वराज'' को निर्माण कार्यक्रम के माध्यम से लागू किया

जाएगा, तो लोग विकास को स्वतंत्रता के रूप में अपनाएंगे न कि आर्थिक प्रगति को। इसके अलावा उन्हें पूंजिवादी देश से बदल कर राज्य–विहीन सामाजिक समाज की रचना करने के लिए एक अहिंसक व्यवस्था की भी आवश्यकता थी। गांधी का अभिभावकता का विचार, मार्क्स के तानाशाही के विचार की तरह ही, इसी उद्देश्य से बनाया गया था। वे मानते थे कि यही एकमात्र तरीका है जिससे भारत राष्ट्र राज्य बनने और दो बुराइयों के बीच में चुनाव करने से बच सकता है। क्या यह सही प्रस्ताव था? या फिर गांधी का प्रस्ताव प्रतिक्रियात्मक और मूर्खतापूर्ण था, जैसा कि नेहरू ने गांधी को ११ जनवरी १९२८ को लिखे पत्र में लिखा था। एक व्यक्ति जिसे लगता था कि यदि भारत ने गांधी की बात पर ध्यान दिया होता तो बहुत ही बढ़िया होता, वे थे नोम चोम्स्की। एक साक्षात्कार में चोम्स्की ने कहा था: ''कुछ सकारात्मक चीज़ें भी हैं – जैसे कि, उनका ग्राम विकास, स्वयं सहायता और सामुदायिक कार्यक्रमों पर ज़ोर देना। यह भारत के लिए बहुत स्वस्थ होता। एक तरह से, वे विकास के ऐसे प्रारूप का सुझाव दे रह थे जो कि अपनाए गए स्टालिन के प्रारूप (जिसमें भारी उद्योगों का विकास आदि शामिल था) से कहीं ज़्यादा सफल और मानवीय होता।''

२०१७ की लोकतंत्र श्रेणीबद्धता में भारत को दोषपूर्ण लोकतंत्र की श्रेणी में रखा गया है। हम में से ज़्यादातर लोगों के लिए यह आश्चर्यजनक बात नहीं है। प्रतिनिधि लोकतंत्र के अंधेरे गलियारे सब के देखने के लिए खुले हैं। अमरीकी लोकतंत्र की तरह, यह भी व्यवस्थित लोकतंत्र है। पैसा, अन्य प्रलोभन और अपारधी चुनावों में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वामपंथी पार्टियों के अलावा, बाकी सभी पार्टियां या तो किसी व्यक्ति के स्वामित्व में चलती हैं, या फिर किसी परिवार या किसी संस्थान के। इस प्रकार पार्टियों के अंतर्गत लोकतंत्र मौजूद नहीं है। यह प्रक्रिया पहली गार कांग्रेस में इंदिरा गांधी के आने पर नज़र आई। धीरे–धीरे इसका असर अन्य पार्टियों पर भी पड़ने लगा। इसके परिणामस्वरूप, पार्टियों ने उन व्यक्तियों के निजि हित में काम करना शुरु कर दिया जो इन पार्टियों के ''स्वामी'' थे, अैर इस प्रक्रिया में आम जनता के हित अक्सर नज़रंदाज होने लगे। इसके अलावा, भारत जैसे एक बहु–सांस्कृतिक, बहु–जातिय और बहु–धार्मिक समाज में, प्रतिनिधि लोकतंत्र में ङ्कङ्कवोट बैंकोंफ्फ़ का निर्माण करने के की एक निहित प्रवृत्ति होती है। इन समाजों में अक्सर होता है कि विभिन्न समूह ऐसी पार्टी/उम्मीदवार को वोट देते हैं, जो उन्हें लगता है उनके हितों की सुरक्षा करेगा। इस प्रवृत्ति का सभी राजनीतिक दल फायदा उठाते हैं। लेकिन हिंदुत्व आंदोलन और उसकी बढ़ोतरी जो कि इस प्रवृत्ति पर आधारित है, अब भारतीय प्रतिनिधि लोकतंत्र को एक बहुसंख्यक लोकतंत्र में बदलने की कोशिश कर रहा है। हिंदुत्व आंदोलन एकीकृत ङ्कङ्कहिंदु धार्मिक समूहफ्फ़ और उसके आधार पर ''हिंदु वोट बैंक'' बनाने की स्थिति में तैयार खड़ा है। आने वाले संसदीय चुनावों में, यदि हिंदुत्व दल सत्ता में लौटते हैं, तो भारत की किस्मत को जल्दी और निर्णायक रूप से सील कर दिया जाएगा। यदि इस बार विपक्षी पार्टियों के साझा प्रयास से इस संभावना को टाल भी दिया जाता है, तो चुनावी राजनीति के तर्क अनुसार, पांच साल बाद यह खतरा और भी ज़्यादा बढ़ जाएगा।

यदि भारत बहुसंख्यक लोकतंत्र और एक ''हिंदु राष्ट्र बन जाता है, तो इसके परिणाम गंभीर होंगे। यदि हम नहीं चाहते कि भारत प्रतिनिधि लोकतंत्र के चुनावी तर्क के कारण दूसरा सीरिया बन जाए, तो हमें गांधी के विकल्प पर ध्यान देना होगा। इसके लिए हमें ऐसे तरीके ढूंढने होंगे जिससे कि सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों की प्रणालियों में हम प्रत्यक्ष लोकतंत्र को लागू कर सकें। एक संभव तरीका है सलाह–मशविरे के आधार पर वोट डालना। इस तरीके से वोट डालने की प्रक्रिया का चाइना में भी कई संदर्भो में इस्तेमाल किया जा चुका है। सलाह–मश्विरे के आधार पर वोट डालने के साथ प्रत्यक्ष लोकतंत्र लागू करने के अलावा, साथ ही साथ हमें संसद और विधान सभाओं को सलाह–मश्विरा आधारित लोकतंत्र में बदलना होगा। इसका मतलब है कि, इन संस्थानों के सदस्यों को उनकी पार्टी के मत से स्वतंत्र निर्णय लेने की स्वतंत्रता होनी चाहिए, जो कि मुद्दे पर चर्चा करने के बाद लिया जाए।

लेखक के बारे में : के.पी. शंकरन सेंट स्टीफन कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में दर्शनशास्त्र पढ़ाते थे।

स्रोत : https://indianexpress.com/article/opinion/columns/indian-democracy-mahatma-gandhi-teachings-indian-parliament-5560286/

◆◆

५. बातचीत

ईकोनारीवाद और क्रांतिकारी पारिस्थितिक लोकतंत्र?

एरियल सलेह (ए.एस.) और आशीष कोठारी (ए.के.) के बीच बातचीत

ए.के. : वैश्विक दक्षिण में 'विकास कट्टराद' पर सवाल उठाने के लिए पारिस्थितिकीय सोच और नारीवाद में क्या समानताएं हैं?

ए.एस. : उत्तर और दक्षिण, दोनों में ईकोनारीवादी राजनीति औरतों के अपने समुदायों में जीने के रोज़ के प्रयासों पर आधारित है, जहां उन्हें बढ़ते हुए मौत के डर और लाभ–आधारित पुरुषवादी संस्कृति का सामना करना पड़ता है। शुरु से ही, पारिस्थितिकीय नारीवादियों ने आर्थिक भूमंडलीकरण के प्रारूप को नकार दिया था और वे पश्चिमी उदारवादी व्यक्तिगत नारीवाद से अलग खड़े रहे हैं। विकास परियोजनाओं और युद्ध में सबसे ज़्यादा औरतें और बच्चे ही प्रभावित होते हैं।

१९७० और १९८० के दशकों में, औरतों द्वारा परमाणु उद्योग के विरोध ने इस चेतना को जगाने में अपनी भूमिका निभाई, और कई पारिस्थितिकीय नारीवादी कार्यकर्ताओं ने अपना ध्यान राज्य और सेना औद्योगिक संकुल की ओर मोड़ दिया। अमरीकी पेन्टागन, यू.के. में ग्रीनहैम कॉमन मिसाइल बेस, और ऑस्ट्रेलिया में आदिवासी ज़मीनों से यूरेनियम के खनन के विरुद्ध प्रतीकातमक प्रदर्शन किए गए। 'धरती पर जीवन के लिए औरतें' प्रत्यक्ष कार्यवाही के साथ–साथ पितृसत्तात्मक ज्ञान निर्माण में आई कमी पर गंभीर रूप से चिंतन भी करेंगी।

ए.के. : ईकोनारीवाद का कोई साहित्य भी है?

ए.एस. : हां, और यह अभी तैयार भी हो रहा है। मूल रूप से, ईकोनारीवादी 'प्रकृति मांफ के यूरोकेन्द्रित शोषण, औरतों के दमन, और इसी विचारधारा के आधार पर, कट्टरवादियों के दमन और प्रजातियों 'अन्य' के बीच गहरा सांस्कृतिक जुड़ाव देखते हैं। हांलाकि 'ईकोनारीवाद' शब्द का पहली बार प्रयोग फ्रैन्कोइज़ डीङ्क यूबोन की फेमिनिज़म और डैथ (१९७४) में किया गया था, लेकिन हर महाद्वीप की औरतें अपने विरोध के आंदोलनों को व्यक्त करने के लिए ऐसे ही शब्दों का निर्माण कर रही थीं। कैरोलीन मर्चेन्ट की द डैथ ऑफ नेचर (१९८०) ने, बेकन से लेकर डेकार्टस तक के 'वैज्ञानिक क्रांतिफ'का विश्लेषण करके, पितृसत्तात्मक अधिकार की इस आलोचना को और गहरा किया। इंग्लैंड में, राज्य द्वारा महिला वैद्यों और दाइयों को डायन कहकर उनका शिकार करने की प्रक्रिया के कारण पुरुषों की रॉयल सोसायटी की स्थापना करने में मदद मिली। जल्द ही आधुनिक चिकित्सा शरीर को एक जीव नहीं बल्कि मशीन की नज़र से देखते हुए उसका उपचार करना शुरु कर देगी जिसे संकेतकों के माप के आधार पर आंका जाएगा। कटौतीवादी और यंत्रों पर आधारित इस विज्ञान की पारिस्थितिकीय कीमतों को वंदना शिवा ने अपनी किताब स्टेयिंग अलाइव (१९८९) में परिभाषित किया। अत: २०वीं सदी के भारत में, 'विकास' प्रौद्योगिकी जैसे कि पैट्रो–खेती और अनुवांशिक तकनीकों से बनाए गए बीजों को 'हरित क्रांति' के रूप में पेश किया गया जिसके मिट्टी, पानी, जंगलों और लोगों की आजीविकाओं पर विनाशक प्रभाव हुए। मैं तो कहूंगी कि जिन लेखकों का यहां वर्णन किया गया है, उन्होंने ईकोनारीवाद के मूल वाक्य हमें दिए, और युवा औरतों की पीढ़ी ने रचनात्मक तरीके से इस राजनीति को आगे बढ़ाया।

ए.के. : क्या ईकोनारीवाद व्यापक समाजवादी सूत्रीकरण में फिट होता है?

ए.एस. : समाजवाद असल में ईकोनारीवाद से संकीर्ण ढांचा है! मार्क्स ने औरतों की एक 'वर्ग' या 'इतिहास के कर्ताओं' के रूप में पहचान नहीं की। लेकिन औरतों का नि:शुल्क घरेलू काम पतियों द्वारा हड़प लिया जाता है और इस शब्द के जैविक और सांस्कृतिक, दोनों अर्थो में समाज को पुनरुत्पादित करके वह पूंजि को सब्सिडाइज़ करता है। दि पावर ऑफ विमेन ऐंड दि सबवर्ज़न ऑफ दि कम्यूनिटि (१९७२) में मारियारोज़ा डाला कोस्टा के अनुसार, औरतें हर पीढ़ी के कामगारों को बिना किसी भुगतान के जन्म देती हैं और पैसा कमाने वाले पुरुषों की सेवा करती हैं, जो पूंजिवाद के लिए अधिशेष मूल्य का उत्पादन करते हैं। मारिया माइस की किताब पेट्रिआर्की ऐंड एक्यूमुलेशन ऑन अ वर्ल्ड स्केल (१९८६) ने रोज़ा लग्ज़मबर्ग के उपनिवेश देशों द्वारा अपरिहार्य श्रम, संसाधन, और संचय के लिए बाज़ार उपलब्ध कराने के विचार को और आगे बढ़ाया। इसके अतिरिक्त, उपनिवेशी व्यापार ने पश्चिमी अफ्रीका की औरतों की आर्थिक स्वतंत्रता का विनाश कर दिया और दूसरी ओर, जर्मनी की औरतों को 'उपभोक्ता घरेलू औरतों' के रूप में घर के कटघरे तक सीमित कर दिया। इसमें कोई शक़ नहीं है कि ईकोनारीवाद एक भौतिकवादी राजनीति है, हांलाकि समस्यात्मक सेक्स – जेन्डर आयाम के चलते, मैं इसे 'एक मूर्त भौतिकवाद' के रूप में परिभाषिति करना पसंद करती हूं। ऐतिहासिक रूप से, पुरुषवादी संस्थान 'विश्व की पहले राजनीतिक व्यवस्था' का निर्माण करते आए हैं, जो हज़ारों वर्षो से चली आ रही है – जबकि पूंजिवाद केवल ५०० वर्ष पुराना है। समाजवादी स्पष्टीकरण अभी भी पूंजिवाद को प्राथमिकता देते हैं, और सेक्स – जेन्डर के आयाम को केवल एक अतिरिक्त पहलू के रूप में मानते हैं। मेरी किताब, ईकोफैमिनिज़्म ऐज़ पॉलिटिक्स (१९९७) इस गलती के राजनीतिक आंदोलनों – मज़दूर आंदोलन, महिला आंदोलन, आदिवासी आंदोलन, और पारिस्थितिकीय आंदोलन – की संभावित एकता पर होने वाले प्रभावों का आंकलन करती है। और यह किताब पुरुष साथियों से 'सेक्स–जेन्डर रिलैक्सिविटीफ का आह्वान करती है – ठीक वैसे ही जैसे एक समय पर औरतों को पता चला कि 'व्यक्तिगत ही रानीतिक है'।

ए.के. : ईकोनारीवाद किन तरीकों से विश्व स्तर पर सामाजिक और पारिस्थितिकीय न्याय के संघर्षों को सूचित और समर्थन देता है? और जलवायु परिवर्तन का क्या?

ए.एस. : औरतें, चाहें वे खुद को 'ईकोनारीवादी' का लेबल देती हों या न देती हों, पर्यावरणीय गैर-सरकारी संस्थाओं में काम करने वालों में सबसे अधिक संख्या में स्वयंसेवियों के रूप में काम करती हैं। वे वनों की कटाई या ज़हरीली मिट्टि और पानी के प्रदूषण का विरोध करते हुए अपने पड़ोसियों को साथ लेकर पहल करती हैं। अंतर्राष्ट्रीय राजनीति स्तर पर औरतें खुल कर बोलती हैं – उरुगुए के विश्व वर्षावन आंदोलन के रूप में; अफ्रीका में खनन के खिलाफ़ औरतों के रूप में; या फिर संयुक्त राष्ट्र जलवायु चर्चाओं में जेन्डर सी.सी. के रूप में। ईकोनारीवादी तर्क देते हैं कि वैश्विक राजनीतिक अर्थव्यवस्था, जो कि पुरुषों की धन और स्तर के लिए प्रतिस्पर्धात्मक खोज, और साथ ही पुरुषवादी निर्णायक संस्थानों की ओर समर्पित है, ऐसे में जलवायु संकट अनिवार्य रूप से एक सेक्स-जेन्डर समस्या है। इसके अतिरिक्त, नवउदारवादी बाजार के तर्क के साथ कटौतीवादी वैज्ञानिक प्रारूपों का नीति बनाने के लिए उपयोग ने जलवायु पर औद्योगिक प्रभावों की पारिस्थितिकीय समझ को नज़रंदाज़ करते हुए, कार्बन की गिनती को प्राथमिकता दी है।

ए.के. : ईकोनारीवादियों को क्या विरोध का सामना करना पड़ा है? उनके कुछ सफल प्रयास क्या रह हैं?

ए.एस. : महिलाओं के सभी सार्वभौमिक उत्पीड़न विभिन्न तरीकों से पारिस्थितिकवादी राजनीति को प्रभावित करते हैं। सफल महिलाओं के नेतृत्व वाले अभियानों को सार्वजनिक प्रवक्ता की भूमिका लेकर अक्सर पुरुष हथिया लेते हैं। मार्क्सवादियों ने ईकोनारीवादियों को ङ्गवर्ग का विश्लेषणफन करने का कारण देते हुए नकार दिया। आधुनिकोत्तर और तकनीकवादी नारीवादी औरतों के प्रजनन श्रम के किसी भी तर्क को यह कह कर अस्वीकार कर देते हैं कि इससे औरतों की पारंपरिक सेक्स-जेन्डर भूमिकाओं के सुदृढ़िकरण होता है। लेकिन नारीवादी पारिस्थितिकीय अर्थशास्त्री अब वैश्विक अर्थव्यवस्था में देखरेख के काम की केन्द्रीयता को मान्यता देने लगे हैं। ऑस्ट्रेलिया में, यूरेनियम खनन के खिलाफ़ औरतों के नेतृत्व वाले एक आंदोलन ने लेबर पार्टी के साथ सफलतापूर्वक पैरवी करते हुए उद्योग पर प्रतिबंध लगवाया, हालांकि इसे बाद में आई सरकार ने वापस ले लिया। एक उच्च स्तरीय ईकोनारीवादी ने पार्टियों को संगठित करके विश्व व्यापार संघ न्यायालय में एक मामले में जीत हासिल की, जिसमें भारतीय नीम के पेड़ पर कॉरपोरेट पेटेन्ट को रद्द किया गया। आज के दिन एक सफल अमरीकी पर्यावरणीय आंदोलन की शुरुआत असल में मांओं द्वारा की गई थी जिनके परिवार मिसिसिपि नदी में औद्योगिक प्रदूषण फैलाए जाने से प्रभावित हो रहे थे।

ईकोनारीवादियों ने पारिस्थितिकीय-दक्षता के सिद्धांत पर आधारित 'निर्वाह दृष्टिकोण' के साथ विघटन के विचार का नेतृत्व किया। ईकोनारीवादी विचारक और लेखक आज भी नवउदारवाद, पारिस्थितिक अर्थविज्ञान, सामाजवाद, पर्यावरणीय आचार, अवनत और विघटन आंदोलनों में पुरुषवादी अंध बिंदुओं को चुनौती दे रहे हैं। चूंकि औरतें मानवता का आधा हिस्सा हैं, इसलिए उनके/हमारे अनुभवों और कौशल को सम्मानपूर्वक सुने बिना तथा पृथ्वी लोकतंत्र के लिए वैश्विक संघर्ष में एकीकृत किए बिना कोई वैश्विक सामाजिक न्याय प्राप्त नहीं किया जा सकता।

एरियल सालेह एक शोध शास्त्री और कार्यकर्ता हैं तो वर्तमान में सिडनी विश्वविद्यालय में राजनीतिक अर्थव्यवस्था से संबद्ध हैं। उनकी पुस्तकों में शामिल हैं – ईकोफेमिनिज़्म ऐज़ पॉलिटिक्स : नेचर, मार्क्स ऐंड दि पोस्टमॉडर्न (२०१७) और ईकोसफिशियेन्सी ऐंड ग्लोबल जस्टिस (२००९)। सामाजिक परस्थिस्थितिक विचारों, वैश्वीकरण, आम विज्ञान, जल और जलवायु राजनीति पर उनके लेख और अध्याय यहां पर देखे जा सकते हैं – www.arielsalleh.info। उनका 'सन्निहित भौतिकवाद' मानव-प्रकृति संबंधों के विषय पर एक उभरता हुआ अध्ययन है जो कि रानजीतिक पारिस्थितिकी के विषय के अध्ययन के लिए एक प्राथमिक पहलू है। उनकी नवीनतम पुस्तक – ''ईकोफैमिनिज़्म ऐज़ पॉलिटिक्स'' रेड के पाठकों के लिए ४० प्रतिशत छूट के साथ www.zedbooks.net पर उपलब्ध है जिसके लिए प्रोमो कोड है ECOFEMINISM ।

आशीष कोठारी कल्पवृक्ष पर्यावरणीय ऐक्शन समूह के सह-संस्थापक हैं।

स्रोत : http://www.radicalecologicaldemocracy.org/ecofeminism-and-radical-ecological-democracy/

◆◆

६. उम्मीद के निशां

पवलगढ़ में समुदाय–आधारित पर्यटन

सीमा भट्ट द्वारा एक अध्ययन

परिचय

पर्यठटन को हमेशा से एक उदार, गैर–उपभोग्य गतिविधि के रूप में बढ़ावा दिया गया है जो यात्री को आनंद और मनोरंजन प्रदान करता है। इसके कारण कई समुदायों और देशों को काफी राजस्व भी प्राप्त हुआ है; लुप्तप्राय प्रजातियों के संरक्षण में मदद मिली है; और इसने सांस्कृतिक विरासत को जीवंत और पुनर्जीवित भी किया है। लेकिन, यह सिक्के का केवल एक पहलू है और कई लोग जो कई दशकों से अपेक्षा करते आए हैं वह वास्तविकता यह है कि पर्यटन जब किसी जगह की वहन क्षमता को पार कर जाता है तो इससे काफी नुक्सान भी हो सकता है। २०१७ की गर्मियों में, मीडिया और यात्रा उद्योग ने अंततः पर्यटन के नकारात्मक प्रभावों को स्वीकार किया और इस तरह से ङ्कअतिवादी पर्यटनफ शब्द का जन्म हुआ। साधारण शब्दों में, अतिवादी पर्यटन तब होता है जब किसी एक गंतव्य स्थान पर ज़रूरत से ज़्यादा यात्री पहुंच जाते हैं। हांलाकि, 'ज़रूरत से ज़्यादा' शब्द अलग अलग जगहों के लिए अलग मायने रखता है और इसे स्थानीय लोग, यात्रा व्यावसायी और पर्यटक स्वयं ही परिभाषित कर सकते हैं। संरक्षित क्षेत्रों के संदर्भ में, इसका निर्धारण पारिस्थितिकीय तंत्र और उसमें रहने वाली प्रजातियों के स्वास्थ्य के आधार पर किया जाता है। अतिवादी पर्यटन के बहुत से सूचक हैं। जब स्थानीय समुदायों को होटल वालों को ज़मीन बेचने के लिए मजबूर किया जाता है; जब जंगलों की सड़कें पर्यटकों की गाड़ियों से जाम हो जाती हैं; जब पर्यटक वन्यजीवों को भीड़ के कारण देख नहीं पाते, और फिर वन्यजीवों को परेशान करते हैं और जब नाज़ुक पारिस्थितिकी तंत्र क्षतिग्रस्त हो जाते हैं, इसका मतलब है कि अतिवादी पर्यटन की शुरुआत हो चुकी है। कॉरबैट बाघ आरक्षित क्षेत्र ''अतिवादी पर्यटन'' की सभी निशानियां दिखा रहा है। यही संदर्भ है जिसके अंतर्गत यह अध्ययन महत्वपूर्ण है। पर्यटन को नए रचनात्मक तरीके से देखने की ज़रूरत है, खासकर कॉरबैट के व्यापक परिदृश्य में। इस अध्ययन में इस परिदृश्य के पारिस्थितिकीय महत्व पर नज़र डालती है और साथ ही ईको हैरीमैन के प्रयास पर प्रकाश डालती है और बताती है कि किस तरह से पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र की घोषणा के साथ–साथ यह प्रयास इस परिदृश्य में वैकल्पिक पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए उत्प्रेरक का काम कर रहा है। इस दिशा में पवलगढ़ प्रकृति प्रहरी नेतृत्व की भूमिका निभा रहा है, जा कि स्थानीय युवाओं का एक समूह है। यह समूह एक उत्कृष्ट मंच है जहां अपने घर पर पर्यटकों को रहने की सुविधा उपलब्ध कराने वाले घर मालिक एक समझौता करेंगे जो उन्हें पवलगढ़ प्रकृति प्रहरी द्वारा स्थापित किए गए नियमों और शर्तो का पालन करने के लिए बाध्य करेगा और इससे उन्हें पवलगढ़ प्रकृति प्रहरी के साथ समझौते के फायदे भी प्राप्त होंगे। यह वाकई में भारत में समुदाय – आधारित पर्यटन का एक उत्कृष्ट रचनात्मक प्रयास है।

व्यापक कॉरबैट परिदृश्य

शिवालिक की पहाड़ियों में, भारत में यमुना नदी और नेपाल में भागमती नदी के इर्द–गिर्द फैला हुआ क्षेत्र, ऐसा परिदृश्य है जिसमें भारत के जाने–माने बाघ आरक्षित क्षेत्र और संरक्षित क्षेत्र शामिल हैं। और इस परिदृश्य तथा भारत का सबसे ज़्यादा लोकप्रिय उद्यान है कॉरबैट राष्ट्रीय उद्यान, जो कि नैनीताल, पौड़ी और अल्मोड़ा जिलों में फैला है। यह परिदृश्य ऊंची पहाड़ियों, रामगंगा नदी, नदी के किनारों, और चारागाहों का अद्भुत मिश्रण है। यह एक अनूठा मिश्रण है – भाभर क्षेत्र की विशेषता वाली चट्टानों और साल के पेड़ों तथा अन्य मिश्रित वन्य प्रजातियों तथा तराई क्षेत्र की विशेषता वाले चिकनी मिट्टी के दलदलों जहां पर ऊंची घास, जलीय क्षेत्र और मिश्रित पतझड़ी वन होते हैं।

कॉर्बेट परिदृश्य

कॉर्बेट परिदृश्य

कॉरबैट सर्वश्रेष्ठ संरक्षित उद्यानों में से एक है, जहां १६४ बाघ और ६०० से ज़्यादा हाथी हैं। हाल के एक सर्वेक्षण से पता चला है कि कॉरबैट में बाघों का सबसे ज़्यादा घनत्व है जो कि २०/१०० वर्ग कि.मी. है। यहां पर ६०० से अधिक पेड़ों, झाड़ियों, जड़ी–बूटियों, बांस, घास, लताओं और फर्न की प्रजातियों की पहचान की गई है। कॉरबैट और राजाजी राष्ट्रीय उद्यानों में भारत के उत्तरपश्चिमी क्षेत्र के अधिकतम बाघ पाए जाते हैं और एशियाई हाथी की भी विश्व में सबसे महत्वपूर्ण आबादी है। ५५० पक्षियों की प्रजातियों के साथ यह एक महत्वपूर्ण पक्षी क्षेत्र भी है।

अंग्रज़ों के आगमन से पहले, १८१५–२० के बीच यह जंगल स्थानीय राजाओं की निजि संपत्ति थे। १८२० में, जब अंग्रेज़ों को इनका स्वामित्व सौंप दिया गया, तब लकड़ी के लिए इन जंगलों का भारी कटान किया गया। यह जंगल साल के लिए प्रसिद्ध थे और यही लकड़ी के लिए भी सबसे पसंदीदा प्रजाति थी। सागवान, जो और भी महंगी लकड़ी होती है, उसे जंगलों के किनारों पर लगाया गया और बाद में उसे रेलवे के स्लीपरों के लिए उपयोग किया गया।

१८५८ में पहली बार मेजर रामसे ने इन जंगलों के संरक्षण की योजना बनाई और ३६ वर्षो की सतर्कता बरतने के बाद, इन जंगलों की हालत में कुछ सुधार आया। १८७९ में, इन जंगलों को आरक्षित घोषित कर दिया गया और १९०७ में एक समर्पित अधिकारी माइकल केन्ट द्वारा इन जंगलों को खेल अभ्यारण्य बनाने का प्रयास किया गया। दुर्भाग्य से, क्षेत्र कमिश्नर विन्धम द्वारा उनके प्रस्ताव को ठुकरा दिया गया। यही समय था जब कर्नल जिम कॉरबैट नरभक्षियों की खोज में इन जंगलों में घूमा करते थे और उनकी इन जंगलों के बारे में जानकारी सराहनीय थी। १९३४ में, संयुक्त प्रांत (जो बाद में उत्तर प्रदेश बना और अब उत्तराखंड है) के राज्यपाल, मैल्कम हेली ने इसे खेल अभ्यारण्य बनाने के प्रस्ताव का समर्थन किया। इसके बाद, स्माइथीज़ ने इसे कानूनी रूप से राष्ट्रीय उद्यान घोषित करवाने के प्रयास किए। स्माइथीज़ ने जिम कॉरबैट के साथ चर्चा करके प्रस्तावित राष्ट्रीय उद्यान की सीमाओं का निर्धारण किया, और इसे बाद में बढ़ाए जाने की काफ़ी गुंजाइश भी रखी। १९३६ में, संयुक्त प्रांत राष्ट्रीय उद्यान अधिनियम बना और इसके परिणामस्वरूप, हेली राष्ट्रीय उद्यान भारत का पहला औश्र विश्व का तीसरा राष्ट्रीय उद्यान बना। १९५२ में इसका नाम बदल कर रामगंगा राष्ट्रीय उद्यान रखा गया, जो कि इस उद्यान और उसमें रहने वाली प्रजातियों के लिए जीवनरेखा नदी का नाम भी है। लेकिन १९५७ में जिम कॉरबैट के निधन के बाद, इसका नाम फिर से बदल कर कॉरबैट राष्ट्रीय उद्यान रख दिया गया, उस व्यक्ति के नाम पर जिसने इसकी सीमाओं के निर्धारण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और जिनका नाम आज भी इस क्षेत्र का पर्याय है।

१९७३ का वर्ष भारत में वन्यजीव संरक्षण के संदर्भ में एक ऐतिहासिक वर्ष था क्योंकि देश में बाघ परियोजना के नाम से एक अग्रणी व्यापक संरक्षण परियोजना की शुरुआत हुई। कॉरबैट राष्ट्रीय उद्यान इस ऐतिहासिक शुरुआत का स्थान बना और १९७३ में, यह उद्यान देश का पहला बाघ आरक्षित क्षेत्र बना। कॉरबैट राष्ट्रीय उद्यान और बाघ आरक्षित क्षेत्र आज के दिन १२८८.३१ वर्ग कि.मी. में फैला हुआ है और यह व्यापक कॉरबैट पृष्ठभूमि का एक हिस्सा है। इसे लंबे समय से ङ्गदहाड़ तुरही और गीत की भूमिम कहा जाता रहा है। इनका मतलब है बाघ की दहाड़, हाथियों की तुरही और पक्षियों का मधुर गीत।

पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र

कॉरबैट बाघ आरक्षित क्षेत्र से आधा कि.मी. पर पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र है, जो कि व्यापक बाघ पृष्ठभूमि का ही एक हिस्सा है। जिम कॉरबैट ने पावलगढ़ को बसाया था, जो कि इन जंगलों के सबसे बड़े बाघा का शिकार करने के लिए जाने जाते हैं। ''पवलगढ़ का कुमार'' की उपाधि दिए गए कॉरबैट ने एक प्रख्यात किताब ''कुमाऊं के नरभक्षी'' में इस बाघ का पीछा और शिकार करने की पूरी गाथा बताई है।

वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, १९७२ में वर्ष २००२ में किए गए संशोधन में संरक्षित क्षेत्रों के लिए दो नई श्रेणियां का प्रावधान किया गया। एक श्रेणी थी संरक्षण आरक्षित क्षेत्र (दूसरी श्रेणी सामुदायिक आरक्षित क्षेत्र है), जिसे राज्य सरकार संबंधित समुदायों के साथ मिलकर की गई चर्चाओं के आधार पर घोषित कर सकती है। पहले से घोषित संरक्षित क्षेत्रों की सीमाओं से लगते हुए क्षेत्र या एक संरक्षित क्षेत्र से दूसरे को जोड़ते हुए क्षेत्रों को प्राथमिकता थी। इसके अनुसार, पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र वर्ष २०१२ में स्थापित किया गया। इस क्षेत्र में तीन नदियां गुज़रती हैं। पश्चिम में कोसी नदी और पश्चिम में बुआर नदी। दबका नदी उत्तरी क्षेत्र में पूर्व से पश्चिम की दिशा में बहती है और पूरे क्षेत्र को बांटती हुई दक्षिण की ओर तराई क्षेत्र में चली जाती है। इस संरक्षण आरक्षित क्षेत्र में बड़े बड़े निर्जन वन हैं। यह ५८.२५ वर्ग कि.मी. आरक्षित क्षेत्र पक्षियों को देखने में रुचि रखने वालों के लिए स्वर्ग है जहं पर ३६५ पक्षी प्रजातियां पाई जाती हैं। कॉरबैट बाघ आरक्षित क्षेत्र में तो संभव नहीं है, पर यहां पर जंगलों में पैदल घूमा जा सकता है। इस आरक्षित क्षेत्र में स्तनधारी जानवरों की भी ३२ प्रजातियां हैं और १२५ से ज़्यादा प्रजातियों की तितलियां।

ईको हैरीमैन्स रिज़ौर्ट

पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र के पास ही एक निराला घरेलू पर्यटक आवास है जिसका नाम है ईको हैरीमैन्स (यह असल में ईको हैरीमैन की पहली संचालन समिति के सदस्यों के नामों के आधार पर बना एक लघु शब्द है)। इसके मालिक और प्रबंधक ऊर्जा से भरे

हैरिमैन आश्रम (रिसोर्ट)

परंपरागत खेलो को डंगित करता बोर्ड

मनरलजी हैं। मनरलजी एक ऐसे परिवार से हैं जिसके बहुत से सदस्य भारतीय सेना में हैं। वे भी सेना में ही भर्ती होना चाहते थे, लेकिन उनका परिवार चाहता था कि वे कुछ और काम करें। उन्होंने दिल्ली से इलेक्ट्रोनिक्स का डिप्लोमा किया और वे अभी रोज़गार तलाश ही रहे थे कि कुछ घटनाओं के कारण उन्हें वापस उत्तराखंड लौटना पड़ा। इस समय उत्तराखंड स्वतंत्र राज्य बनने के आंदोलन में संघर्षरत था। वे भी इस आंदोलन का हिस्सा बनना चाहते थे और किसी तरह से राज्येक प्राकृतिक सौंदर्य को बढ़ावा देना चाहता थे। तब उन्होंने पवलबढ़ में अपने पारिवारिक मकान से पर्यटन प्रयास शुरु करने का निर्णय लिया। वर्ष २००० में, राज्य वन विभाग ने जब ईमानदारी से ईकोपर्यटन की दिशा में देखना शुरु किया, तो इसके लिए मनरलजी की जगह सबसे अच्छी पाई गई।

इस रिज़ौर्ट में सबसे नीचे तीन कमरे, और पहली मंजिल पर तीन कमरे हैं, जिनमें अलग अलग संख्या में पलंग उपलब्ध हैं। कमरे साफ़ और आरामदायक हैं। पीछे की तरफ़ शौचालय और बाथरूम बने हैं। इसके सामने एक और निर्माण है जिसमें पहली मंजिल पर बाहर बैठकें करने के लिए जगह है। खूब सारी किताबों और दीवार पर सजी वन्यजीवों से संबंधित कलाएं दर्शाती हैं कि आप एक सही प्रकृतिविद् की संगति में हैं। एक सुंदर फलों के बगीचों से गुज़रते हुए आप खाने के हॉल में पहुंचते हैं, जहां पर ज़रूरत पड़ने पर लोग सो भी सकते हैं। पूरे रिज़ौर्ट की दीवारों पर स्थानीय कलाकाराके द्वारा बनाए हुए प्रकृति से संबंधित चित्र टंगे हुए हैं, जो कि इस जगह को और भी जीवंत और आकर्षक बनाते हैं। यह स्कूल/ कॉलेज के शिविरों के लिए अच्छी जगह है। मनरलजी की पत्नि की निगरानी में रसोई में स्वादिष्ट स्थानीय और जैविक व्यंजन पकाए जाते हैं।

ईको हैरीमैन में यात्रियों के लिए प्राकृतिक सैर, कैम्पस पर शिविर, साहसिक गतिविधियों आदि तथा कुछ पारंपरिक खेलों की व्यवस्था की जाती है। काफी लोग तो इस निराले वातावरण में बस आराम करने, पोषक खाना खाने और शांति का आनंद लेने के लिए ही आते हैं। इनमें कई लोग तो नियमित रूप से शहरों के शोर/ भागदौड़ भरे जीवन से छुट्टी लेने के लिए आते हैं। कुछ प्रकृतिवादी इस रिज़ौर्ट को अपना बेस बना कर फिर संरक्षण आरक्षित क्षेत्र में खोज के लिए जाते हैं। कुछ युवा हैं जो कभी भी यहां पर अपनी सेवाएं देने के लिए आ सकते हैं और रिज़ौर्ट की गतिविधियों में हाथ बंटाते हैं। रिज़ौर्ट में कई बार संरक्षण संबंधी बैठकें और कार्यक्रम भी आयोजित किए जाते हैं। रिज़ौर्ट की वार्षिक आय रु.३–५ लाख है, और यह सतत भी है तथा अन्य संबंधित गतिविधियों का सहयोग करने में भी सक्षम है।

पवलगढ़ प्रकृति प्रहरी

उत्तराखंड में पक्षी उत्सव : एक अनूठा प्रयास

उत्तराखंड की उत्कृष्ट पक्षी जैवविविधता को मान्यता और उसके संरक्षण की आवश्यकता पर ज़ोर देते हुए, उत्तराखंड वन विभाग ने वर्ष २०११ से पूरे राज्य में पक्षी–अवलोकन शिविर लगाने शुरु किए। २०११ से २०१६ के बीच, वन विभाग की ईको–पर्यटन इकाई ने २५–३० ऐसे शिविरों का सहयोग किया। इन शिविरों ने पक्षी उत्सवों का रूप ले लिया, जो पहली बार आसन में २०१४ में हुआ। राज्य में पक्षी–अवलोकन को प्रोत्साहन देने और इस विषय पर जागरुकता बढ़ाने की यह सराहनीय पहल उस समय के प्रमुख वनपाल और ईको–पर्यटन के संचालक, राजीव भर्तरी ने की। इनके प्रति लोगों की प्रतिक्रिया काफ़ी उत्साहपूर्ण रही और तितिली ट्रस्ट,[१] कल्पवृक्ष तथा हिमल प्रकृति जैसे समूहों की भागीदारी से यह उत्सव राज्य में अब नियिमित रूप से हो रहे हैं। यह उत्सव ऐसे अवसर हैं जहां वन विभाग के कर्मचारी, स्थानीय समुदायों के लोग, टूर गाइड व अन्य लोगों को पक्षियों के बारे में मूलभूत जानकारी प्राप्त होती है और वे फिर उनके संरक्षण के दूत बन जाते हैं।

दूसरा पक्षी उत्सव वर्ष २०१५ में पवलगढ़ में हुआ। इस उत्सव के दौरान हुई एक समुदाय–आधारित पर्यटन के विषय पर कार्यशाला से, और अधिक प्रशिक्षित प्रकृति गाइडों की आवश्यकता निकल कार आई, विशेषकर जब से पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र की घोषणा हुई, तब से। तितली ट्रस्ट[१] नामक गैर–सरकारी संस्था ने वन विभाग से आग्रह किया कि वे एक प्रकृति गाइड प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए सहयोग दें, जिससे कि ग्रामीण युवाओं को भी संरक्षण से जोड़ने में मदद मिलेगी। इस ज़रूरत को ध्यान में रखते हुए, पवलगढ़ प्रकृति प्रहरी की स्थापना की गई। पी.पी.पी. को एक गैर–मुनाफा प्रकृति संरक्षण सोसाइटी के रूप में दिसंबर २०१५ में पंजीकृत किया गया। इस सोसाइटी का प्रमुख उद्देश्य है प्रकृति संरक्षण, पर्यावरण सुरक्षा और सतत जीवन को बढ़ावा देने के लिए वैकल्पिक व्यवसायों जैसे कि ईकोपर्यटन को घरेलू आवास व्यवस्था, अनुभवी गाइडों के साथ प्रकृति सैर और स्थानीय उत्पाद तथा खान–पान को बढ़ावा देना। पी.पी.पी. प्रकृति व्याख्या उत्पाद बेचने में भी सहयोग करता है, जैसे कि किताबें, पर्चे, शिल्प, चित्र आदि। सोसइटी ज़्यादातर पवलगढ़ संरक्षण क्षेत्र के अंदर ही काम करती है और इसके सदस्य पवलगढ़ के आसपास के गांवों में ही रहते हैं। इनमें शामिल हैं : पवलगढ़, मनकंथपुर, क्यारी, कोटाबाघ, स्यात, रामनगर, गबुआ, छोई और आमटोली।

स्थापित होने के बाद, तितली ट्रस्ट ने ७० दिनों तक प्रकृति गाइडों का गहन प्रशिक्षण किया। इस प्रशिक्षण में शामिल था, पक्षी अवलोकन का मूल कौशल विकास जिसके बाद माह में दो बार इसका अभ्यास किया जाता था; प्राथमिक उपचार; बातचीत करने का तरीका; और कहानियां सुनाने का तरीका। अन्य संस्थाओं जैसे कि वाइल्ड लाइफ ट्रस्ट ऑफ इंडिया और उत्तराखंड वन विभाग द्वारा भी अन्य प्रशिक्षण किए गए। इनमें शामिल थे, एडवांस्ड प्रकृति गाइड का प्रशिक्षण और ट्रैकिंग लीडरों का प्रशिक्षण। २०१६ के अंत में एक चार–दिवसीय परीक्षा आयोजित की गई। ६५ युवाओं ने यह परीक्षा ली, जिनमें से वन विभाग के अनुरोध के अनुसार ३० का चयन किया गया। यही समय था जब वन विभाग अपनी बात से पीछे हट गया और उसने प्रशिक्षित प्रकृति गाइडों को नौकरी पर नहीं रखा, जैसा कि पहले समझौता हुआ था। यह स्पष्ट नहीं है कि यह क्यों की गई। इस बीच प्रशिक्षित युवाओं की अपेक्षाएं बहुत बढ़ गई थीं, और अंत में उन्हें निराश होना पड़ा। पहले अनुबंध के दो साल बाद, हाल में, प्रकृति गाइड कार्यक्रम के अंतर्गत फिर से गाइडों के पंजीकरण की बात हुई। लेकिन दुर्भाग्य से, कई प्रशिक्षित प्रकृति गाइड युवाओं ने दूसरे व्यवसाय शुरु कर दिए हैं और अब कुछ ही बाकी बचे हैं।

और अधिक समुदाय–आधारित पर्यटन की ओर

वन विभाग द्वारा प्रशिक्षित युवाओं को नौरी पर न रखे जाने के परिणामस्वरूप, पी.पी.पी. ने तितली ट्रस्ट और मनरलजी के सहयोग से, पवलगढ़ में समुदाय–आधारित पर्यटन के मॉडल पर काम करना शुरु किया। इसके अंतर्गत पी.पी.पी. का उद्देश्य है :

- पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र के स्थानीय युवाओं को आजीविका दिलवाना जिसमें पर्यटकों के लिए कई तरह के उत्पाद उपलब्ध कराए जा सकते हैं, जैसे कि गाड़ी सफारी और चिह्नित पैदल पथों के लिए प्रकृति गाइड का काम, स्थानीय गृह–आवास, स्थानीय व्यंजन व अन्य स्थानीय उत्पाद।
- सुनिश्चित करना कि पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र में पर्यटन पर्यावरण–पक्षी, सतत और तुल्य रहे जहां स्थानीय समुदायों तक फायदे पहुंचें।
- पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र में प्रकृति संरक्षण गतिविधियों को सहयोग देना, जैसा कि पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र प्रबंधन के साथ चर्चा करके तय किया गया हो।

इस पृष्ठभूमि के आधार पर, पी.पी.पी. अब गृह–आवास सेवाएं शुरु करने का प्रयास कर रहा है जिसमें सामुदायिक गृह–आवास और व्यक्तिगत गृह–आवास दोनों शामिल हैं। इसे आगे ले जाने के लिए पी.पी.पी. व्यक्तिगत गृह–आवास मालिकों के साथ अनुबंध करेगा जो फिर पी.पी.पी. की शर्तों का पालन करेंगे और उसके बदले उन्हें पी.पी.पी. अनुबंध के फायदे प्राप्त होंगे।

१. तितली ट्रस्ट एक गैर–मुनाफा संस्था है जो कि देहरादून भारत में स्थित है। उसका प्रमुख काम है हिमालय में संरक्षण और आजीविकाएं।

अनुबंध के अंतर्गत, पी.पी.पी. की जिम्मेदारी होगी यात्रियों के बीच गृह–आवासों का प्रचार करना; ग्राहकों के साथ अनुबंध; यात्रा विवरण और समय–सारिणी तैयार करना; बुकिंग और आर्थिक लेनदेन की व्यवस्था; गृह–आवासों का पंजीकरण; और नियमित प्रशिक्षण तथा क्षमता वर्धन। पी.पी.पी. गृह–आवासों का वार्षिक आंकलन करने का अधिकार रखता है जिसके लिए पहले से ही मानक स्थापित किए जाएंगे। इन मानकों को समय–समय पर ग्राहकों की प्रतिक्रियाओं के आधार पर संशोधित किया जाएगा। गृह–आवास मालिक यदि अपने आप कोई प्रचार की गतिविधि करते हैं तो उन्हें पी.पी.पी. को सूचित करना होगा और तब भी जब वे किसी बड़े समूह/ स्कूल/ संस्थान के साथ कोई काम करें। गृह–आवास मालिकों को यात्रियों के लिए पक्षी अवलोकन और प्रकृति या विरासत सैर तथा अन्य गतिविधियों जैसे कि पांरपरिक खेलों के लिए गाईड उपलब्ध कराने के लिए तैयार रहना होगा।

स्थानी समुदाय के क्षमता निर्माण के लिये

मनरलजी इस क्षेत्र में ईको–पर्यटन के संदर्भ में वाकई में नवपरिवर्तक रहे हैं। उनका रिज़ौर्ट अब ईको–पर्यटन संबंधी गतिविधियों का केन्द्र बन गया है। उनके अपने मेहमानों के अलावा, मनरलजी ने स्थानीय युवाओं को संभाला है और पी.पी.पी. को भी ईको–पर्यटन के रास्ते पर चला रहे हैं। ईको हैरीमैन कई प्रशिक्षणों और क्षमता–वर्धन गतिविधियों के लिए गंतव्य बन गया है। मनरलजी इस क्षेत्र में ईकोपर्यटन के आंदोलन का नेतृत्व कर रहे हैं और वह भी उदाहरण के साथ।

जिम्मेदार पर्यटन : व्यापक संदर्भ

कॉरबैट बाघ आरक्षित क्षेत्र में ईको पर्यटन

वन्यजीव पर्यटन की बढ़ती लोकप्रियता के कारण भारी संख्या में यात्री आने लगे हैं, खासकर छुट्टियों के समय में। कॉरबैट जैसे संरक्षित क्षेत्रों के सामने आज 'अत्यधिक पर्यटन' की समस्या खड़ी हो गई है जिसके कारण आवास क्षेत्र में क्षति और वन्यजीवों को परेशानी हो रही है। कॉरबैट बाघ आरक्षित क्षेत्र का दिल्ली से पास होना और इसकी लोकप्रियता 'पांच सितारा' संस्कृति को बढ़ावा दे रही है, जिसमें संपन्न लोग इन क्षेत्रों में आने लगे हैं, लेकिन उन्हें अपी विलासिता की सभी चीज़ें चाहिएं और वे उनके लिए पैसा देने के लिए भी तैयार हैं। रामनगर के पास उद्यान की पूर्वी सीमा पर भारी संख्या में लक्ज़री रिज़ौर्ट बन गए हैं और उनमें साल भर पर्यटक आते रहते हैं। कॉरबैट बाघ आरक्षित क्षेत्र देश के सबसे मशहूर संरक्षित क्षेत्रों में से एक है। यहां वार्षिक रूप से लगभग २ लाख पर्यटक आते हैं। उद्यान के अधिकारियों के अनुसार, सीज़न में १५० गाड़ियों में ६०० लोग प्रतिदिन उद्यान के अंदर जाते हैं। आरक्षित क्षेत्र के आसपास के क्षेत्र में ३००० लोगों के रहने की व्यवस्था है (www.indiaenvironmentportal.org.in/files/corbett_tourism_report.pdf)। भारतीय वन्यजीव संस्थान ने कॉरबैट के पूर्वी किनारे के बाहर बसे ढिकुली गांव में पर्यटन के प्रभावों का एक अध्ययन किया। इस अध्ययन से पता चला कि उद्यान के आसपास के गांवों में पर्यटन के कारण सामाजिक अशांति फैल रही है, क्योंकि पर्यटन से कुछ लोगों ने बहुत पैस कमा लिया है जिसके कारण आर्थिक असमानता, आक्रोष और झगड़े बढ़ रहे हैं। क्षेत्र के लग्ज़री रिज़ौर्टो के कारण यहां के गांवों में पानी की कमी हो गई है क्योंकि इन रिज़ौर्टो में बहुत ज़्यादा पानी का उपयोग होता है (http://www.sanctuaryasia.com/magazines/cover-story/10094-tourists-from-the-dark-side.html)।

कॉरबैट क्षेत्र पर्यटन के संदर्भ में खतरे की स्थिति में है। इसकी लोकप्रियता को देखते हुए, और बफर क्षेत्र में चिंताजनक स्तर पर बढ़ती हुई लग्ज़री रिज़ौर्टो की संख्या के कारण इस क्षेत्र का बड़े पैमाने के पर्यटन से दम घुटने का खतरा है। इसके लिए प्यार से यह मर रहा है। अक्सर, 'पांच सितारा रिज़ौर्ट' पर्यटन की संस्कृति में, पर्यटकों को वन्यजीवों की बहुत कम परवाह होती है, और वे वहां सिर्फ मज़े करने के लिए आते हैं। कुछ तो केवल बाघ देखने के लिए आते हैं और उसे देखने के लिए वे कुछ भी कर सकते हैं। अंततः, कुछ ऐसे भी लोग हैं जो वास्तव में प्रकृति से प्यार करते हैं और उसका संरक्षण करना चाहते हैं, जो जंगल की शांति और एकांतता का आनंद उठाने के लिए आते हैं। विडंबना यह है कि हांलाकि वे आरक्षित क्षेत्र के सच्चे मित्र हैं, अब वे ही वहां आने से कतराते हैं। कॉरबैट व कई अन्य क्षेत्रों की पृष्ठभूमि में पर्यटन में विविधता लाने की आवश्यकता है और उसे

केवल उद्यानों तक सीमित रहने से आगे बढ़ना होगा। इस संदर्भ में, पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र की घोषणा और पी.पी.पी. का प्रयास वाक़ई में समयसंगत हैं। ज़रूरत है कि पर्यटन गतिविधियां कॉरबैट उद्यान से बाहर भी उपलब्ध हों और बेहद ज़रूरी है कि इसकी व्यापक पृष्ठभूमि में पर्यटन को बढ़ावा दिया जाए। और इसके लिए पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र आदर्श क्षेत्र है। इसके अलावा, पी.पी.पी. मॉडल पर्यटन में स्थानीय युवाओं को शामिल करने के लिए बढ़ावा देता है जिससे उन्हें संरक्षण में भी भागीदारी करने का मौका मिलता है। वर्तमान में कॉरबैट के अधिकारियों पर इसके प्रबंधन को लेकर बहुत दबाव है विशेषकर, पर्यटकों की संख्या और प्रकार के संदर्भ में। पी.पी.पी. एक ऐसा सहयोगी है जो प्रकृति गाइड सेवाएं और वैकल्पिक आवास उपलब्ध कराने में सक्षम है। इसके अलावा, पी.पी.पी. की आचरण संहिता सुनिश्चित करती है कि पवलगढ़ संरक्षण आरक्षित क्षेत्र में पर्यटन सतत व जिम्मेदार बना रहे।

लेखक के बारे में : सीमा भट्ट एक स्वतंत्र सलाहकार हैं जो जैवविविधता, जलवायु परिवर्तन और ईकोपर्यटन के विषयों पर काम करती हैं। वे कल्पवृक्ष के साथ कई वर्षों से जुड़ी हुई हैं।

पाठकों के लिए संदेश:

प्रिय पाठकों, यदि आप समुदाय व संरक्षण की प्रति किसी अलग पते पर प्राप्त करना चाहते है तो कृपया हमें अपना पता milindwani@yahoo.com पर या नीचे लिखे पते पर भेज दें।

कल्पवृक्ष

डकुमेंटेशन एंड आउटरीच सेंटर, अपार्टमेंट ५, श्री दत्ता कृपा, ९०८, डेक्कन जिमखाना,

पुणे ४११००४. महाराष्ट्र – भारत

वेबसाइट : www.kalpavriksh.org

समुदाय व संरक्षण : जैव विविधता संरक्षण तथा आजीविका सुरक्षा संस्करण अंक ९, नं. २–३ जून २०१८ – मई २०१९

संकलन एवं संपादन : मिलिन्द वाणी

संपादकीय सहयोग : अनुराधा अर्जुनवाडकर

अनुवाद : निधि अग्रवाल

फोटो : सीमा भट्ट

प्रकाशक :
कल्पवृक्ष,
अपार्टमेंट ५, श्री दत्ता कृपा, ९०८,
डेक्कन जिमखाना, पुणे–४११००४.
फोन : ९१–२०–२५६७५४५०,
फैक्स : ९१–२०–२५६५४२३९
ई–मेल : KVoutreach@gmail.com,
वेबसाइट : www.Kalpavriksh.org

आर्थिक सहयोग : मिजेरिओर, आचेव, जर्मनी

निजी वितरण के लिये

प्रकाशित विषयवस्तु (Printed matter)

सेवा में,